श्रीमते रामानुजाय नमः

श्रीकूरनारायणमुनिविरचितम्—

श्रीसुदर्शनशतकम्

सान्वय हिन्दीभाषानुवादसहितम्

तथा

विहगेन्द्रसंहितान्तर्गतं-

सुदर्शनकवचम्

अनुवादकः—

दार्शनिक सार्वभौमः श्रीमद्रामानुजाचार्य-

श्री माधवाचार्य्य

बड़गादी, बम्बई २



प्रकाशक—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-" लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर " स्टीम्-प्रेस,

कल्याण-बंबई.

संवत २०१६, सन् १९५९.

दो शब्द



श्रीकूरनारायण मुनि प्रणीत यह सुदर्शनशतक स्तोत्र श्रीवैष्णव सिद्धान्त एवं वैदिक समाज के लिये एक अनुपम रत्न है। इसकी रचना एक बड़ी विपत्ति के समय श्रीरङ्गनाथ भगवान के परम भक्त एवं उत्कृष्ट विद्वान् श्रीरंग क्षेत्रनिवासी श्रीकूरनारायण मुनि द्वारा कई शताब्दियों के पूर्व की गई है।

इसका पाठ एवं सविध अनुष्ठान, अवश्य शीघ्र फलप्रद होता है। पूर्व से लेकर आज तक भक्त आराधक-धर्म-अर्थ-काम एवं मोक्ष की भावनाओं से, इसका सफल अनुष्ठान करते चले आरहे हैं। वस्तुतः श्रीसुदर्शनराजके महत्व एवं विलक्षण चमत्कारों से सारा संस्कृत वाङ्मय भरा हुआ है। इस विषय में आस्तिकों के लिये इससे अधिक कुछ कहना सूर्य के लिये दीपक दिखाने के सदृश होगा। हां, तो, किसी भी पुराण या स्तोत्र आदि का पाठ अर्थानुसन्धान के विना किये जाने पर समुचित फल प्रद नहीं होता। अतः अर्थज्ञान अत्यावश्यक वस्तु है। यह सुदर्शनशतक स्तोत्र अति कठिन और भाव गम्भीर है। इसके आराधकों के द्वारा समय-समय पर "इसकी भी एक ऐसी टीका होनी चाहिये जिससे कि इसका भावार्थ सर्व साधारण को भी ठीक-ठीक रूप से समझ में आसके" ऐसे शब्द श्रवण में आते रहते हैं। यद्यपि इस पर एक-दो संस्कृत और हिन्दी टीका भी लोगों के दृष्टिगोचर हैं। तथापि अभी भी आकांक्षायें

दो शब्द



श्रीकूरनारायण मुनि प्रणीत यह सुदर्शनशतक स्तोत्र श्रीवैष्णव सिद्धान्त एवं वैदिक समाज के लिये एक अनुपम रत्न है। इसकी रचना एक बड़ी विपत्ति के समय श्रीरङ्गनाथ भगवान के परम भक्त एवं उत्कृष्ट विद्वान् श्रीरंग क्षेत्रनिवासी श्रीकूरनारायण मुनि द्वारा कई शताब्दियों के पूर्व की गई है।

इसका पाठ एवं सविध अनुष्ठान, अवश्य शीघ्र फलप्रद होता है। पूर्व से लेकर आज तक भक्त आराधक-धर्म-अर्थ-काम एवं मोक्ष की भावनाओं से, इसका सफल अनुष्ठान करते चले आरहे हैं। वस्तुतः श्रीसुदर्शनराजके महत्व एवं विलक्षण चमत्कारों से सारा संस्कृत वाङ्मय भरा हुआ है। इस विषय में आस्तिकों के लिये इससे अधिक कुछ कहना सूर्य के लिये दीपक दिखाने के सदृश होगा। हां, तो, किसी भी पुराण या स्तोत्र आदि का पाठ अर्थानुसन्धान के विना किये जाने पर समुचित फल प्रद नहीं होता। अतः अर्थज्ञान अत्यावश्यक वस्तु है। यह सुदर्शनशतक स्तोत्र अति कठिन और भाव गम्भीर है। इसके आराधकों के द्वारा समय-समय पर "इसकी भी एक ऐसी टीका होनी चाहिये जिससे कि इसका भावार्थ सर्व साधारण को भी ठीक-ठीक रूप से समझ में आसके" ऐसे शब्द श्रवण में आते रहते हैं। यद्यपि इस पर एक-दो संस्कृत और हिन्दी टीका भी लोगों के दृष्टिगोचर हैं। तथापि अभी भी आकांक्षायें अशान्त

देखी जाती हैं। अतः इसी दृष्टिकोण को लेकर, कि, स्तोत्र के श्लोकों के भाव संस्कृत न जानने वाले लोग हिन्दी भाषा भाषी भी, समझ कर लाभ ले सकें "मूल के साथ २ अन्वय सहित हिन्दी भाषा में समझाने का प्रयास किया गया है। यद्यपि इसमें सभी शब्दों का पूर्णतः अर्थ लाने का प्रयास तो नहीं किया गया तथापि सभी के भाव प्रायः उचित मात्रा में आगये हैं। इसलिये प्रेमियों को इससे यदि कुछ भी लाभ हुआ तो मुझे सन्तोष होगा।

श्री माधवाचार्य्यः

श्रीमत्सुदर्शन भगवते नमः

श्रीसुदर्शनशतकम्



सौदर्शन्युज्जिहाना दिशि विदिशि तिरस्कृत्य सावित्रमार्चिं-
र्बाह्याबाह्यान्धकारक्षतजगदगदङ्कारभूम्ना स्वधाम्ना ।
दोःखर्जूदूरगर्जद्विबुधरिपुवधूकण्ठवैकल्यकल्या
ज्वाला जाज्वल्यमाना वितरतु भवतां वीप्सयाऽभीप्सितानि ॥ १ ॥

अन्वय—बाह्याबाह्यान्धकारक्षतजगदगदंकारभूम्ना स्वधाम्ना, सावित्रमर्चिस्तिरस्कृत्य, दिशिविदिशि उज्जिहाना दोः खर्जूदूरगर्जद्विबुधरिपुवधूकण्ठवैकल्यकल्या, जाज्वल्यमाना सौदर्शिनी ज्वाला, भवतां, अभीप्सितानि, वीप्सया वितरतु ॥ १ ॥

जो, प्राणियोंके मनके बाहर रहने वाले, विषय वासनाकी प्रवृत्ति रूप, तथा अन्दरके भी अज्ञान अन्यथा ज्ञान विपरीत ज्ञान स्वरूप अन्धकार से पीडित संसारको स्वस्थ करने वाले अपने प्रभाव शाली तेज द्वारा सूर्यके तेजको तिरस्कृत करके प्रत्येक दिशाओंमें उदय प्राप्त करती है। एवं जो दैत्य, दानव, युद्धकी इच्छासे अपनी भुजाओंमें उठी हुई खुजलाहटके कारण सिंहनाद करते रहते हैं, उन्हें मारकर और उनकी स्त्रियोंको विधवा बनाकर कण्ठ सूत्र आदि आभरणोंसे शून्य करके जो उनको, अमंगल स्वरूप प्रदान कर देती है। वह सर्वदा प्रकाशमान रहने वाली श्रीसुदर्शन भगवान्की ज्वाला आपके अभीष्टको बार बार सम्पन्न करे ॥ १ ॥

प्रत्युद्यातं मयूखैर्नभसि दिनकृतः प्रत्तसेवं प्रभाभि-
र्भूमौ सौमेरवीभिर्दिवि वरिवसितं दीप्तिभिर्देवधाम्नाम् ।

भूयस्यै भूतये वः स्फुरतु सकलदिग्भ्रान्तसान्द्रस्फुलिङ्गम्
चाक्रं जाग्रत्प्रतापं त्रिभुवनविजयव्यग्रमुग्रं महस्तत् ॥ २ ॥

अन्वय—सौमेरवीभिः प्रभाभिः भूमौ प्रत्त (प्राप्त) सेवम्, दिनकृतः मयूखैः नभसि प्रत्युद्यातम्, देवधाम्नाम् दीप्तिभिः दिविवारिवसितम्, सकलदिग्भ्रान्तसान्द्रस्फुलिङ्गम्, त्रिभुवन विजय व्यग्रम्, जाग्रत्प्रतापम्, उग्रं, चाक्रम् महः, वः भूयस्यै भूतये भूयात् ॥ २ ॥

सुमेरु पर्वत अपनी प्रभाओं द्वारा भूलोकमें जिसकी सेवा करता रहता है। और आकाश मण्डलमें सूर्यकी किरणों द्वारा जिसका स्वागत किया जाता है। इसी तरह स्वर्गलोकमें भी देवताओंके भव्य सुवर्णमय भवनोंकी दिव्य कान्तिसे जिसका पूजन किया जाता है। समस्त दिशायें जिसके तेजस्वी स्फुलिंगसे व्याप्त रहती हैं, और जो स्वयं तीनों लोकके विजयके लिये सर्वदा सतर्क रहा करता है। इस प्रकार अत्यन्त प्रतापवान् और भयंकर श्रीसुदर्शन चक्रका वह दिव्य तेज आपके लिये अधिकसे अधिक ऐश्वर्य प्रदान करें। ॥ २ ॥

पूर्णे पूरैः सुधानां सुमहति लसतः सोमबिम्बालवाले-
बाहाशाखावरुद्धक्षिति गगनदिवश्चक्रराजद्रुमस्य ।
ज्योतिश्छद्मा प्रवालः प्रकटितसुमनः संपदुत्तंसलक्ष्मीं
पुष्णन्नाशामुखेषु प्रदिशतु भवतां सप्रकर्षं प्रहर्षम् ॥ ३ ॥

अन्वय— सुधानां पूरैः पूर्णे, सुमहति सोमबिम्बालवाले लसतः बाहाशाखावरुद्ध क्षितिगगनदिवः चक्रराजद्रुमस्य ज्योतिश्छद्मा प्रवालः प्रकटित सुमनः सम्पत्, आशामुखेषु उत्तंसलक्ष्मीं पुष्णन् भवतां सप्रकर्षं प्रहर्षं प्रदिशतु ॥३॥

अमृत रससे परिपूर्ण चन्द्र, मण्डल रूप आलवाल (थाले) में विराजमान तथा अपनी भुजा रूप शाखाओंसे, पृथिवी आकाश एवं स्वर्गको आच्छादित करनेवाले श्री चक्रराज रूप कल्पवृक्षके ज्योतिः स्वरूप पत्ते जो सुमन (पुष्प) के सदृश सत्परिषद् द्वारा विकसित

रहते हैं। वे कान्ता रूप दिशाओंके मुखमण्डल पर अलंकारकी शोभा सम्पादन करते हुए आप सबके लिये विशेष रूपसे प्रमोद प्रदान करें।

आरादारात्सहस्राद्विसरति विमतक्षेपदक्षाद्यदक्षा-
न्नाभेर्भास्वत्सनाभेर्निजविभवपरिच्छिन्नभूमेश्च नेमेः ।
आम्नायैरेककण्ठैः स्तुतमहिम महो माधवीयस्य हेते-
स्तद्वो दिक्ष्वेधमानं चतसृषु चतुरः पुष्यतात्पूरुषार्थान् ॥ ४ ॥

अन्वयः—सहस्रात्, आरात्, विमतक्षेपदक्षात्, अक्षात्, भास्वत् सनाभेः निजविभव परिच्छिन्न भूमेः नेमेः सकाशात् सञ्जातं यन्महः आरात् विसरति। एक कण्ठैः आम्नायैः स्तुतमहिम चतसृषु दिक्षु एधमानं माधवीयस्य हेतेः तन्महः चतुरः पूरुषार्थान् पुष्यतात् ॥ ४ ॥

सहस्रों अरोंसे तथा शत्रु संहारमें प्रवीण अक्ष द्वारा और सूर्यके सदृश तेज वाली नाभिसे एवं अपने विभवसे भूमण्डलको मापनेवाली नेमि द्वारा निकला हुआ सर्वत्र व्यापनशील तेज जिसके महत्वका वर्णन चारों वेद सर्वदा एक स्वरसे करते रहते हैं। चारों दिशाओंमें वृद्धिशील भगवान्के चक्रका वह तेज आप सबके धर्म आदि चारों पुरुषार्थोंका पोषण करे ॥ ४ ॥

श्यामं धामप्रसृत्या क्वचन भगवतः क्वापि बभ्रु प्रकृत्या-
शुभ्रं शेषस्य भासा क्वचन मणिरुचा क्वापि तस्यैव रक्तम् ।
नीलं श्रीनेत्रकान्त्या क्वचिदपि मिथुनस्यादिमस्येव चित्रां-
व्यातन्वानं वितानश्रियमुपचिनुताच्छर्म वश्चक्रभानम् ॥ ५ ॥

अन्वयः—क्वचन भगवतः धाम प्रसृत्या श्यामम्, क्वापि प्रकृत्या बभ्रु, क्वचन शेषस्य भासा शुभ्रम्, क्वापि तस्यैव मणिरुचारक्तम्, क्वचिदपि श्रीनेत्र-कान्त्यानीलम्, आदिमस्य मिथुनस्य चित्रांवितानश्रियं व्यातन्वानं, चक्र-भानं वः शर्म उपचिनुतात् ॥ ५ ॥

श्री सुदर्शनका जो तेज, भगवान्के श्याम विग्रहके सम्बन्धसे किसी प्रदेशमें तो श्याम रंगका भासित होता है, और कहीं पर अपनी स्वाभाविक कान्तिसे पीत वर्ण का । इसी प्रकार कहीं कहीं श्री शेषभगवान्की धवल कान्तिके संसर्गसे शुभ्र वर्णका और किसी-किसी स्थलपर तो उन्हीं शेषजीकी मणियोंकी चमकाहटसे रक्त वर्ण का ज्ञात होता है। एवं किसी प्रदेश पर, श्रीदेवीके दिव्य नील कमल सदृश नेत्रकी कान्तिसे उसकी नील वर्णकी छटा मालूम पड़ती है। इस प्रकार आदि कालीन दिव्य दम्पति भगवान श्रीलक्ष्मीनारायणके लिये विचित्र रंगके मण्डपके चांदनीकी शोभाको प्रवृद्ध करता हुआ श्रीचक्रराजका वह प्रकृष्ट तेज आपकी सुख परम्पराको प्रचुर मात्रा में बढ़ावे ॥ ५ ॥

शंसन्त्युन्मेषमुच्छोषितपरमहसो भास्वतः कैटभारे-
रिन्धेसंध्येव नक्तं चरविलयकरी या जगद्वन्दनीया ।
बन्धूकच्छायबन्धुच्छविघटितघनच्छेदमेदस्विनी सा-
राथाङ्गी रश्मिभङ्गी प्रणुदतु भवतां प्रत्यहोत्थानमेनः ॥ ६ ॥

अन्वयः—उच्छोषित परमहसो भास्वतः कैटभारेश्च उन्मेषं शंसन्ती नक्तं चरविलयकरी सन्ध्येव जगद्वन्दनीया, या राथाङ्गी रश्मिभङ्गी इन्धे । बन्धूकच्छायबन्धुच्छवि घटितघनच्छेद मेदस्विनी सा, भवतां प्रत्यहोत्थानम्, एनः प्रणुदतु ॥ ६ ॥

अन्यके तेजके शोषक जो श्रीसूर्य देव उनके उदयके समान भगवान्की विचित्र शक्तिके उदयको प्रकाशित करने वाली, राक्षसोंका संहार करने वाली तथा सन्ध्याके सदृश समस्त जगतकी वन्दनीय, श्री सुदर्शन चक्रकी ज्वाला जो जपा कुसुमकी कान्ति वाले मेघमण्डल के संसर्गसे प्रचुर मात्रामें सुशोभित होती है । वह आपके प्रत्येक दिनके अर्जित पापको शमन कर दें ॥ ६ ॥

साम्यं धूम्याप्रवृद्ध्या प्रकटयति नभस्तारकाजालकानि-
स्फौलिंगी यान्ति कान्तिं दिशति यदुदये मेरुरंगारशंकाम् ।

अग्निर्मग्नार्चिरैक्यं भजति दिननिशावल्लभौ दुर्लभाभौ-
ज्वालावर्ताविवस्तः प्रहरणपतिजं धाम वस्तद्धिनोतु ॥ ७ ॥

अन्वयः—यदुदये नभः धूम्या प्रवृद्ध्या साम्यं प्रकटयति, तारकाजालकानि स्फौलिंगीं कान्ति यान्ति । मेरुः अंगार शंकां दिशति । अग्निः मग्नार्चिः, ऐक्यं भजति, दिननिशावल्लभौ ज्वाला वर्तौ इव स्तः । एतादृशं प्रहरणपतिजं धामवःधिनोतु ॥ ७ ॥

जिस ज्वाला चक्रके तेजके उदय होनेपर आकाश धूम मण्डल के सदृश प्रतीत होता है और नक्षत्रगण स्फुलिंग (चिनगारी) जैसे । सुमेरु पर्वत अंगारके समान जान पड़ता है तथा अग्निका तेज तो उसी ज्वालाके तेजमें विलीन हो जाता है । चन्द्र एवं सूर्य भी हत-प्रभ होकर ज्वालाके आवर्त (भँवर) जैसे प्रतीत होते हैं । इस प्रकार का सुदर्शन का दिव्य तेज आपको सुखी करे ॥ ७ ॥

दृष्टेऽधिव्योम चक्रे विकचनवजपासंनिकाशे सकाशं-
स्वर्भानुर्भानुरेष स्फुटमिति कलयन्नागतो वेगतोऽस्य ।
निष्टप्तो यैर्निवृत्तो विधुमिव सहसा स्प्रष्टुमद्यापि नेष्टे
घर्मांशुं ते घटन्तामहितविहतये भानवो भास्वरा वः ॥ ८ ॥

अन्वयः—अधिव्योम विकचनवजपा सन्निकाशे चक्रे, दृष्टे स्वर्भानुः एषः भानुः इति स्फुटंकलयन् , अस्यसकाशं वेगतः आगतः । यैःनिष्टप्तः निवृत्तः सन् अद्यापि घर्मांशुं विधुमिव सहसा स्प्रष्टुमपि नेष्टे ।ते भास्वरा. भानवः वः अहितविहतये घटन्ताम् ॥ ८ ॥

किसी समय आकाश मण्डलसे प्रफुल्लित जपा पुष्पके सदृश श्रीचक्रराजको देखकर राहु उन्हें सूर्य समझकर अतिशय वेगपूर्वक निगल जानेके लिये दौड़ पड़ा । परन्तु उनकी प्रतप्त किरणोंसे संतप्त होकर लौट आया । उस समयसे वह सूर्य देवको सहसा स्पर्श करने का साहस नहीं करता जैसा कि चन्द्रमाको किया करता है । इस

प्रकारकी श्रीसुदर्शन चक्रकी भास्वर किरणें आपके शत्रु वर्गका विनाश करती रहें ॥ ८ ॥

देवं हेमाद्रितुङ्गं पृथुभुजशिखरं बिभ्रतीं मध्यदेशे-
नाभिद्वीपाभिरामामरविपिनवतीं शेषशीर्षासनस्थाम् ।
नेमिं पर्यायभूमिं दिनकरकिरणादृष्टसीमः परीत्य-
प्रीत्यै वश्चक्रवालाचल इव विलसन्नस्तु दिव्यास्त्ररश्मिः ॥ ९ ॥

अन्वयः—पृथुभुज शिखरं हेमाद्रितुङ्गं देवं मध्यदेशे बिभ्रतीम् , नाभिद्वीपाभिरामाम्, अरविपिनवतीं शेषशीर्षासनस्थाम् , पर्याय भूमिं नेमिं परीत्य, दिनकरकिरणादृष्टसीमः चक्रवालाचलइव विलसन् दिव्यास्त्ररश्मिः वः प्रीत्यै अस्तु ॥ ९ ॥

मांसल भुजदण्डके सदृश शिखर वाले सुमेरु पर्वतके समान अत्यन्त उन्नत श्रीसुदर्शन देवको जो अपने मध्य प्रदेशमें धारण करती हैं और जिनकी नाभि अन्तरीपके सदृश सुशोभित होती है । अर-समूह ही जिसमें सघन वन हैं । तथा जो श्रीशेषके फण पर विराजमान एक दूसरी पृथिवीकी तरह मालूम पड़ती है । उस नेमिको सभी ओरसे व्याप्त करके तथा जहां सूर्यकी भी किरणें नहीं पहुँच पातीं उस लोकालोक पर्वतके समान शोभित चक्रराजकी किरणें आपको सुख प्रदान करें ॥ ९ ॥

एकं लोकस्य चक्षुर्द्विविधमपनुदत्कर्म नम्रत्रिनेत्रं-
दात्रर्थानां चतुर्णां गमयदरिगणं पञ्चतां षड्गुणाढ्यम् ।
सप्तार्चिःशोषिताष्टापदनवकिरणश्रेणिरज्यद्दशांशं-
पर्यस्याद्वः शताङ्गावयवपरिवृढज्योतिरीतीः सहस्रम् ॥ १० ॥

अन्वयः—लोकस्य एकं चक्षुः, द्विविधंकर्म अपनुदत । नम्र त्रिनेत्रं, चतुर्णां अर्थानांदातृ, अरिगणंपञ्चतां गमयत् । षड्गुणाढ्यम् , सप्तार्चिः शोषिताष्टापदनवकिरणश्रेणिरज्यद्दशांशम् । शतांगावयवपरिवृढज्योतिः । सहस्रम् , इतीः (आपदः) पर्यस्यात् ॥ १० ॥

जो विश्वके मार्ग प्रदर्शन करनेमें, नेत्रके समान प्रधान है और जिससे शुभ और अशुभ कर्म विनष्ट हो जाते हैं। जो त्रिनेत्र शंकरजी से सुसेवित होकर, उपासकोंको धर्म-अर्थ-काम एवं मोक्ष प्रदान करती तथा शत्रुवर्गका संहार करती है। जो-ज्ञान-शक्ति-बल-ऐश्वर्य तथा वीर्य और तेज इन षड् गुणोंसे सम्पन्न है। जो अग्निमें प्रतप्त सुवर्णके सदृश, अभिनव किरण समूहसे दशों दिशाओंको लालरंग में रंगती रहती है। वह श्रीसुदर्शन चक्रकी दिव्य ज्योति आपकी सहस्त्रों विपत्तियोंका निराकरण करे ॥ १० ॥

उच्चण्डे यच्छिखंडे निविडयति नभःक्रोडमर्कोऽटतिद्या-
मभ्यस्य प्रौढतापग्लपितवपुरपो बिभ्रतीरभ्रपंक्तीः ।
धत्ते शुष्यत्सुधोत्सो विधुरपमधुनः क्षौद्रकोशस्य साम्यं
रक्षन्त्वस्त्रप्रभोस्ते रचितसुचरितव्युष्टयो घृष्टयो वः ॥ ११ ॥

अन्वयः—उच्चण्डे (अत्यन्तकराले) यच्छिखण्डे (ज्वाला समूहे) नभः क्रोडंनिविडयति (प्रकटयति) सति अर्कःप्रौढतापग्लपितवपुः सन्, अपोविभ्रतीः अभ्रपङ्क्तीः अभ्यस्य (पौनःपुन्येनाधिगम्य) द्याम् अटति । विधुःशुष्यत्सुधोत्सः अपमधुनः क्षौद्रकोशस्य साम्यं धत्ते । अस्त्रप्रभोस्ते रचित सुचरितव्युष्टयो घृष्टयो, वः रक्षन्तु ॥ ११ ॥

शत्रुदलको प्रलय करनेवाली सुदर्शन ज्वालाके आकाश मण्डल में प्रकट होने पर उससे प्रतप्त होकर सूर्य, क्षीणकाय बन, शीतल जल पूर्ण मेघ पंक्तिका आश्रय लेता है। तथा चन्द्रमा भी अमृत प्रवाहके शुष्क हो जानेसे मधुशून्य मधुच्छत्रके सदृश निष्प्रभ हो जाता है। इस प्रकार विविध सच्चरित्रकी समृद्धि करनेवाली श्रीचक्रराजकी किरणें आप सबकी रक्षा करें ॥ ११ ॥

भ्रान्तजनोंसे सन्दिग्ध रूपसे देखी जाने वाली—

पद्मौघो दीर्घिकाम्भस्यवनिधरतटे गैरिकाम्बुप्रपातः
सिन्दूरं कुञ्जराणां दिशि दिशि गगने सांध्यमेघप्रबन्धः ।
पारावारे प्रवालो वनभुवि च तथा प्रेक्ष्यमाणः प्रमुग्धैः
साधिष्ठं वः प्रमोदं जनयतु दनुजद्वेषिणस्त्वैषराशिः ॥ १२ ॥

अन्वयः—दीर्घिकाम्भसि पद्मौघः किम् ? अवनिधरतटेगैरिकाम्बु प्रपातः किम् ? दिशिदिशि कुञ्जराणां सिन्दूरंकिम् ? गगने सान्ध्यमेघः प्रबन्धः किम् ? पारावारेप्रवालः किम् ? वनभुविचतथाप्रवालः किम् ? एवं प्रमुग्धैः संदिग्धं प्रेक्ष्यमाणः दनुजद्वेषिणस्त्वैषराशिः वः साधिष्ठं प्रमोदं जनयतु ॥१२॥

श्रीचक्रराजका ज्वाला समूह, स्वच्छतर सरोवरके जलमें प्रतिबिम्बित होनेपर अल्पज्ञोंके लिये, कमल खण्डके समान, और पर्वतोंके स्फटिक तटमें गेरूके निर्झर प्रपातके सदृश तथा पूर्व आदि दिशाओं में दिग्गजोंके मस्तकके अलंकार स्वरूप सिन्दूरकी तरह एवं आकाश में सायंकालीन जलधर पटलकी भांति भासित होता है। इसी प्रकार, समुद्रमें प्रवाल (मूँगे) की तरह और वनस्थलीमें तो किसलय (पल्लव) के सदृश जान पड़ता है। इस प्रकार दैत्य एवं दानव कुलके संहारक श्रीसुदर्शन भगवान्‌की वह दिव्य तेजोराशि, आपके लिये, सन्तोषप्रद प्रमोद और प्रबोध प्रदान करे ॥ १२ ॥

भानो भा नो त्वदीया स्फुरति कुमुदिनीमित्र ते कुत्र तेज-
स्तारास्थारादधीरोऽस्यनल न भवतः स्वैरमैरम्मदार्चिः ।
शंसन्तीत्थं नभःस्था यदुदयसमये चक्रराजांशवस्ते
युष्माकं प्रौढतापप्रभवभवगदापक्रमाय क्रमन्ताम् ॥ १३ ॥

अन्वयः—यदुदयसमयेनभस्था, इत्थं शंसन्ति हे भानो ! त्वदीया भा नोस्फुरति । हे कुमुदिनी मित्र ते तेजः कुत्र । हे ताराः ! आरात्स्थ, हे अनल ! अधीरोऽसि । हे ऐरम्मदार्चिः ! भवतः स्वैरं न । तेचक्रराजांशवः वः प्रौढतापप्रभवभवगदापक्रमाय क्रमन्ताम् ॥ १३ ॥

जिस चक्र ज्वालाके उदयकालमें आकाशके देवता लोग इस प्रकार उपहासपूर्वक कहते हैं कि हे सूर्य ! अब तुम्हारा तेज नहीं चमक रहा है। हे चन्द्र ! तुम्हारा प्रकाश कहां विलीन हो गया ? हे तारागण ! तुम सभी अदृश्य लग रहे हो। हे अग्निदेव क्यों अधीर बन रहे हो ? हे विद्युतलते ! अब तुम्हारी स्वतन्त्रता छिन गई। इस प्रकार सूर्य चन्द्र ग्रह नक्षत्रोंको आक्रान्त करने वाली श्रीचक्रराजकी किरणें आपको प्रकृष्ट सन्ताप देनेवाले, भवरोगके उपशमनके लिये सर्वदा सचेष्ट रहें ॥ १३ ॥

जग्ध्वा कर्णेषु दूर्वांकुरमरिसुदृशामक्षिषु स्वर्वधूनां-
पीत्वा चाम्भश्चरन्त्यः सवृषमनुगता वल्लवेनादिमेन ।
गावो वश्चक्रभर्तुः परममृतरसं प्रश्रितानां दुहाना
ऋद्धिंस्वालोकलुप्तत्रिभुवनतमसः सानुबन्धां ददन्ताम् ॥ १४ ॥

अन्वयः—अरिसुदृशांकर्णेषु दूर्वांकुरं जग्ध्वा, स्वर्वधूनां, अक्षिषु अम्भः पीत्वा, सवृषमनुचरन्त्यः आदिमेन वल्लवेन अनुगता। प्रश्रितानां अमृतरसंदुहाना, स्वालोकलुप्तत्रिभुवनतमसः, चक्रभर्तुः गावः, वः सानुबन्धांऋद्धिं-ददन्ताम् ॥ १४ ॥

शत्रुवर्गकी स्त्रियोंके कानोंमें आभूषणके स्थानपर धारण किये गये नूतन दूर्वादलके गुच्छोंको खाकर और उन्हें विधवा बनाकर पश्चात् देवांगनाओंके नेत्रके शोकाश्रुको पी करके वृष रूप धर्मके साथ आदि गोपाल श्रीकृष्ण चन्द्रका अनुगमन करनेवाली, और अपने आश्रितोंको मोक्षरूप अमृत देती हुई एवं अपने प्रकाश द्वारा त्रिलोक के अन्धकारको नष्ट करने वाली, श्रीचक्रराज भगवानकी श्रीगोस्वरूप किरणें आपको नित्य स्थायी सम्पत्ति प्रदान करें ॥ १४ ॥

सेनां सेनां मघोनो महति रणमुखेऽलंभयं लम्भयन्ती-
रुत्सेकोष्णाल्लुदोष्णां प्रथमदिविषदामावलीर्यावलीढे ।
विश्वं विश्वंभराद्यं रथपदधिपतेर्लीलया पालयन्ती-
ऋद्धिः सादीधितीनां वृजिनमनुजनुर्मार्जयत्वार्जितं वः ॥ १५ ॥

अन्वयः—महतिरणमुखे सेनां (सेनापतिसहितां) मघोनः सेनां, अलं-भयं लम्भयन्ती । उत्सेकोष्णालुदोष्णां प्रथमदिविषदां, आवलीः यावलीढे । विश्वम्भराद्यं विश्वलीलया पालयन्ती रथपदधिपतेः दीधितीनां ऋद्धिः वः अनुजनुः (जन्मजन्मार्जितं) वृजिनंमार्जयतु ॥ १५ ॥

जो भयंकर युद्धके स्थलमें सेनापति सहित इन्द्रकी सेनाको पर्याप्त भयभीत करती हुई एवं वलसे उन्मत्त तथा प्रतप्त और असहिष्णु भुजा वाले दैत्य दानवोंके समूहको भक्षण कर डालती है। इस प्रकार श्रीसुदर्शनराजकी ज्वालाराशि, जो समस्त भूमण्डल आदिलोकोंके परित्राणकी अनायास ही क्षमता रखती है। वह आप सबके जन्म जन्मार्जित पापोंका प्रक्षालन करे ॥ १५ ॥

तप्ता स्वेनोष्मणेव प्रतिभटवपुषामस्रधारां धयन्ती
प्राप्तेव क्षीबभावं प्रतिदिशमसकृत्तन्वती घूर्णितानि ।
वंशास्थिस्फोटशब्दं प्रकटयति पटून्याऽऽवहन्त्यट्टहासान्-
भा सा वः स्यन्दनांगप्रभुसमुदयिनी स्पन्दतां चिन्तिताय ॥ १६ ॥

अन्वयः— याभाः स्वेनोष्मणा तप्ताप्रतिभट वपुषाम्, अस्रधारां धयन्ती क्षीबभावं प्राप्तेव, प्रतिदिशं घूर्णितानि, असकृत्तन्वती, वंशास्थिस्फोट शब्दम् आवहन्ती, पटून् अट्टहासान् प्रकटयति । स्यन्दनांगप्रभु समुदयिनी सा भाः वः चिन्तिताय स्पन्दताम् ॥ १६ ॥

जो चक्र ज्वाला, अपनी ऊष्मासे प्रतप्त होकर शत्रुवृन्दके शरीरसे निकली हुई रक्तधाराके पीनेसे, उन्मत्त जैसी बनकर प्रत्येक दिशाओं में बार बार घूमा करती है । तथा शरीरके आधारभूत वंशनालके समान आकार वाली, पीठकी हड्डीके टूटनेकी तरह चटचटा शब्द किया करती है । इस प्रकार चित्तको विक्षुब्ध करने वाले साट्टहासको करती हुई वह श्री सुदर्शनराजकी दिव्य प्रभा आपके अभीष्ट मनोरथ को सफल करनेके लिये सचेष्ट हो ॥ १६ ॥

देवैरासेव्यमानो दनुजभटभुजादण्डदर्पोष्णतप्तै
राशारोधोऽतिलंघी लुठदुडुपटलीलक्ष्यडिण्डीरपिण्डः ।
रिंगज्ज्वालातरंगत्रुटितरिपुतरुव्रातपातोग्रमार्ग-
श्चाक्रो वः शोचिरोघः शमयतु दुरितापह्नवं दाववह्निम् ॥ १७ ॥

अन्वयः—दनुजभटभुजादण्डदर्पोष्णतप्तैः देवैः, आसेव्यमानः आशारोधोऽतिलंधी लुठदुडुपटलीलक्ष्यडिण्डीरपिण्डः, रिङ्गज्ज्वालातरङ्ग त्रुटितरिपुतरुव्रातपातोग्रमार्गः सः चाक्रः शोचिरोघः वः दुरितापह्नवंदाव-वह्निं शमयतु ॥ १७ ॥

दानव वीरोंके दर्पपूर्ण भुजदण्डोंकी ऊष्णतासे सन्तप्त देववर्ग जिसकी सेवा करते हैं और जो दिशारूप सीमाओंको अतिक्रान्त कर लिया है, चमकते हुए नक्षत्र मण्डल जिसमें फेन पिण्डके सदृश प्रतीत होते हैं। जो अपनी ज्वालारूप चञ्चल तरंगों द्वारा वृक्ष समूह रूप शत्रु मण्डलको तोड़-तोड़ गिरा देनेसे मार्गको भयंकर कर डाला है। वह श्रीसुदर्शन ज्वालारूप महानद आप लोगके पापोंके दावा-नलको शमन करे॥ १७ ॥

भ्राम्यन्ती संश्रितानां भ्रमशमनकरी च्छन्नसूर्यप्रकाशा-
सूर्यालोकानुरूपा रिपुहृदयतमस्कारिणी निस्तमस्का ।
धारासंपातिनी च प्रकटितदहना दीप्तिरस्त्रेशितुर्व
श्चित्राभद्राय विद्रावितविमतजना जायतामायताय ॥ १८ ॥

अन्वयः—स्वयं भ्राम्यन्ती संश्रितानां भ्रमशमन करी, च्छन्नसूर्य प्रकाशा सूर्यालोकानुरूपा रिपु हृदयतमस्कारिणी निस्तमस्का । धारा संपा-तिनी च प्रकटितदहना, विद्रावितविमतजना, अस्त्रेशितुः चित्रा दीप्तिः वः आयताय भद्राय जायताम् ॥ १८ ॥

श्री चक्रराजकी जो विचित्र प्रभा स्वयं भ्रमण करती हुई भी अपने आश्रितोंके भ्रमको शमन करती है। एवं सूर्य प्रकाशको आवृत करती

हुई भी सूरिओंको दर्शनमें प्रकाश प्रदान करती है। शत्रुओंको विचेत बनाती हुई भी स्वयं ज्योतिस्वरूप है। तथा जल प्रपातका कारण होकर प्रचण्ड अग्निको भी दीप्त करती है। प्रतिपक्षियोंको विद्रावण कर देनेवाली वह दिव्य प्रभा आपके लिये असीम मंगल सम्पन्न करे ॥ १८ ॥

निन्ये वन्येव काशी दवशिखिजटिलज्योतिषा येन दाहं-
कृत्या वृत्याविलिल्ये शलभसुलभया यत्र चित्रप्रभावे।
रुद्रोऽप्यद्रेर्दुहित्रा सह गहनगुहां यद्भयादभ्ययासीत्-
दिश्याद्विश्वार्चितो वः स शुभमनिभृतं शौरिहेतिप्रतापः ॥ १९ ॥

अन्वयः—दवशिखिजटिलज्योतिषा येन काशी वन्या इव दाहंनिन्ये। चित्रप्रभावे यत्र प्रतापे कृत्या शलभसुलभया वृत्या विलिल्ये। रुद्रोऽप्यद्रेः दुहित्रा सह यद्भयात् गहनगुहां, अभ्ययासीत्। विश्वार्चितः सः शौरिहेति प्रतापः वः अनिभृतं शुभं दिश्यात् ॥ १९ ॥

दावानलके समान जिसकी जाज्वल्यमान ज्वालाने काशीपुरी को वन समूहकी तरह भस्मसात् कर दिया था और उसके विचित्र तेजमें कृत्या (पिशाची) शलभ (पतंगे) के सदृश विलीन हो गई। जिससे भयभीत होकर शंकर भी पार्वतीके साथ बड़ी गहन गुफामें जाकर छिप गये। श्री चक्रराजका वह विश्ववन्द्य प्रताप आप सभीको प्रस्फुट कल्याण प्रदान करे ॥ १९ ॥

उद्यन्बिम्बादुदारान्नयनजलहिमं मार्जयन्निर्जरीणा-
मज्ञानध्वान्तमूर्च्छाकरजनिरजनीभञ्जनव्यञ्जिताध्वा।
न्यक्कुर्वाणो ग्रहाणां स्फुरणमपहरन्नार्चिषः पावकीया-
श्चक्रेशार्कप्रकाशो दिशतु दश दिशो व्यश्नुवानं यशो वः ॥ २० ॥

अन्वयः—उदारात् बिम्बात् उद्यन्, निर्जरीणां नयनहिमजलं मार्जयन्, अज्ञानध्वान्तमूर्च्छाकरजनिरजनीभञ्जनव्यञ्जिताध्वा। ग्रहाणां स्फुरणं

न्यक्कुर्वाणः, पावकीयाः अर्चिषः अपहरन् चक्रेशार्कप्रकाशः वः दश दिशोऽप्यश्नुवानं यशः प्रदिशतु ॥ २० ॥

अत्यन्त विशाल मण्डलसे प्रकट होकर देवांगनाओंके शीतल शोकाश्रुका सम्मार्जन करता हुआ एवं अज्ञानरूप अन्धकारकी मूर्च्छा कर, व्यामोहात्मक रात्रिको विनष्ट करके जो सुस्पष्ट मार्गका प्रदर्शन करता है। तथा जिसने नक्षत्रोंकी कान्तिको तिरस्कृत करते हुए अग्नि ज्वालाओंको भी हतप्रभ कर डाला है। श्रीसुदर्शन सूर्यका वह प्रकाश आपके लिये दश दिगन्त व्यापी यश प्रदान करे। ॥ २० ॥

वर्गस्य स्वर्गधाम्नामपि दनुजनुषां विग्रहं निग्रहीतुं
दातुंसद्योवलानां श्रियमतिशयिनीं पत्रभंगानुवृत्त्या।
योक्तुं देदीप्यते या युगपदपि पुरो भूतिमय्या प्रकृत्या-
सा वो नुद्यादविद्यां द्युतिरमृतरसस्यन्दिनी स्यान्दनांगी ॥ २१ ॥

अन्वयः—स्वर्ग धाम्नां वर्गस्य दनुजनुषां वर्गस्यापि विग्रहं निग्रहीतुं दानववर्गस्यवलानां (सैन्यानां) पत्रभङ्गानुवृत्या (वाहनविनाशप्रणाल्या) अतिशयिनीं श्रियं (सम्पदम्) दातुं (नाशयितुम्) सद्यः स्वर्गधाम्नाम्, अवलानाम्, पत्रभंगानुवृत्या (कर्णाभरणविरचनानुवृत्या) अतिशायिनीं श्रियं (शोभां) दातुं (वितरितुं) दानववर्गस्य पुरः (नगराणि-शरीराणि) भूतिमय्या (भस्मप्रचुरतया) प्रकृत्या (शरीरेण) योक्तुं देववर्गस्य पुरः (पत्तनानि) भूतिमय्या (ऐश्वर्यप्रचुरतया) प्रकृत्या (स्वभावेन) योक्तुं च या स्यान्दनांगी द्युतिः, प्रकाशते, अमृतरसस्यन्दिनी सा वः अविद्यां नुद्यात् ॥ २१ ॥

देवता और दैत्योंके विरोध तथा शरीरके उपशमके लिये, दैत्योंकी सेनाके वाहनोंको विनष्ट करके, और उनकी सम्पत्तिको भी नष्ट भ्रष्ट करनेके लिये, तथा देवांगनाओंको कर्णके आभूषणसे अलंकृत करके, अत्यन्त शोभा प्रदान करनेके लिये एवं दानवोंके नगरोंको भस्म करके, राखका ढेर कर देनेके लिये तथा अमरावतीको उत्तम

ऐश्वर्य द्वारा समृद्ध करनेके लिये जो सर्वदा सुप्रकाशित रहती है। अमृत रसका प्रवाह बहाने वाली श्रीचक्रराज भगवान्‌की वह ज्वाला कान्ति आपकी अविद्याका निराकरण करे॥ २१॥

दाहं दाहं सपत्नान्समरभुवि लसद्भस्मना वर्त्मना यान्-
क्रव्यादप्रेतभूताद्यभिलषितपुषा प्रीतकापालिकेन ।
कंकालैः कालधौतं गिरिमिव कुरुते यः स्वकीर्तेर्विहर्तुम्-
घृष्टिः सांदृष्टिकं वः सकलमुपनयत्वायुधाग्रेसरस्य ॥ २२ ॥

अन्वयः—समर भुविसपत्नान् दाहं दाहं, लसद्भस्मना क्रव्यादप्रेत भूताद्यभिलषितपुषा प्रीतकापालिकेन वर्त्मना यान् यो घृष्टिः स्वकीर्तेः विहर्तुं कंकालैः कालधौतं गिरि मिव कुरुते। सः आयुधाग्रेसरस्य घृष्टिः वः सकलं साहष्टिकं (सद्यः कालीनं फलम्, उपनयतु ॥ २२ ॥

समर भूमिमें राक्षस वीरोंको जला-जलाकर उनके शरीरकी भस्मसे विभूषित एवं अपक्व मांसाहारी भूतप्रेतोंको सुपुष्ट करनेवाली तथा रुधिर पान करनेवाले कापालिक वृन्दसे व्याप्त मार्ग द्वारा गमन करती हुई जो चक्र ज्वाला अपनी कीर्ति संचारके लिये मृत दैत्योंके अस्थि पुञ्जसे कैलाश पर्वतके समान श्वेत पर्वतका निर्माण करती है। वह आप सबके अभीष्ट फलको सद्यः सम्पन्न करे॥ २२॥

दग्धानां दानवानां सभसितनिचयैरस्थिभिः सर्वशुभ्रां-
पृथ्वीं कृत्वापि भूयो नवरुधिरझरीकौतुकं कौणपेभ्यः ।
कुर्वाणं बाष्पपूरैः कुचतटघुसृणक्षालनैस्तद्वधूनाम्-
पापं पापच्यमानं शमयतु भवता मस्त्रराजस्य तेजः ॥ २३ ॥

अन्वयः—दग्धानां दानवानां सभसितनिचयैः अस्थिभिः पृथ्वीं सर्वशुभ्रां कृत्वा भूयः तद्वधूनां कुचतटघुसृणक्षालनैः बाष्पपूरैः कौणपेभ्यः नवरुधिरझरी कौतुकं कुर्वाणं अस्त्रराजस्यतेजः भवतां पापच्यमानं पापं शमयतु ॥ २३ ॥

जो दैत्य दानवोंको जलाकर और उसकी भस्ममय अस्थियों द्वारा सम्पूर्ण पृथ्वीको श्वेत वर्णकी बनाकर तथा उनकी स्त्रियोंके कुचोंमें अनुलिप्त कुंकुम पंकको प्रक्षालन करने वाले अश्रु प्रवाहके साथ ही साथ, पिशाच दलके लिये, अभिनव रुधिर धाराके प्रवाहका नाट्य रचता है। वह श्री सुदर्शन चक्रका दिव्य तेज आपके पूर्ण परिपक्व पापको शमन करे॥२३॥

मा गान्मोषं ललाटानल इति मदनद्वेषिणा ध्यायतेव-
स्रष्ट्रा प्रोन्निद्रवासाम्बुजदलपटलप्लोषमुत्पश्यतेव ।
वज्राग्निर्मास्म नाशं व्रजदिति चकितेनेव शक्रेण बद्धैः
स्तोत्रैरस्त्रेश्वरस्य द्यतु दुरितशतं द्योतमाना द्युतिर्वः ॥ २४ ॥

अन्वयः—ललाटानल मोषं मा गादिति ध्यायतेव, मदनद्वेषिणा, प्रोन्निद्रवासाम्बुजदलपटलप्लोषमुत्पश्यतेव, स्रष्ट्रा, वज्राग्निः नाशं मास्म व्रजदिति चकितेन इवशक्रेण, बद्धैः स्तोत्रैः द्योतमाना, अस्त्रेश्वरस्य द्युतिः, वः दुरितशतं द्यतु ॥ २४ ॥

मस्तककी नेत्राग्नि कहीं शान्त न हो जाय इस आशंकासे शंकर जी द्वारा, तथा अपने निवास स्थान रूप, विकसित कमल दलके दग्ध हो जानेकी आशंकासे श्रीब्रह्मदेव, एवं अपने वज्राग्निके शीतल पड़ जानेके भयसे इन्द्रदेव, द्वारा किये गये सुबद्ध स्तोत्रोंसे प्रकाशमान श्री सुदर्शन भगवान्‌की ज्वाला आपके, सैकड़ों पापोंको विनष्ट कर दे॥२४॥

इति ज्वालावर्णनम् ॥ १ ॥

शास्त्रास्त्रं शात्रवाणां शलभकुलमिव ज्वालया लेलिहाना-
घोषैः स्वैः क्षोभयन्ती विघटितभगवद्योगनिद्रान्समुद्रान् ।
व्यूढोरःप्रौढचारत्रुटितपटुरटत्कीक सक्षुण्णदैत्या
नेमिः सौदर्शनी वः श्रियमतिशयिनीं दाशतादाशताब्दम् ॥ २५ ॥

अन्वयः--शात्रवाणां शस्त्रास्त्रं शलभकुलमिव ज्वालया लेलिहाना, स्वै घोषैः विघटितभगवद्योगनिद्रान् समुद्रान् क्षोभयन्ती । व्यूढोरः प्रौढचार त्रुटितपटुरट त्कीकसक्षुण्णदैत्या सौदर्शनी नेमिः वः अतिशयिनीं श्रियम्, आशताब्दात्, दाशतात् (दद्यात्) ॥ २५ ॥

शत्रुवर्गके अस्त्रशस्त्रोंको जो इस प्रकार निगल कर विलीन कर लेती है जैसे दीप पतंगे को। और अपने भयंकर घोषों द्वारा भगवान् की योग निद्राके अधिष्ठान स्वरूप समुद्रोंको विक्षुब्ध करती हुई तथा दैत्योंके विशाल वक्षः स्थलकी हड्डियोंको तोड़कर जो उन्हें धूलमें मिला देती है। वह श्री सुदर्शन चक्रकी नेमि, आपके लिये सहस्रों वर्षतक उत्तम सम्पत्ति प्रदान करती रहे ॥ २५ ॥

धारा चक्रस्य तारागणकपिशघृणिद्योतितद्युप्रचारा-
पारावाराम्बुपूरक्वथनपिशुनितोत्तालपातालयात्रा ।
गोत्राद्रिस्फोटदशब्दप्रकटितवसुधामण्डलीचण्डयाना-
पन्थानं वः प्रदिश्यात्प्रशमनकुशला पाप्मनामात्मनीनम् ॥ २६ ॥

अन्वयः--तारागणकपिशघृणिद्योतितद्युप्रचारा, पारावाराम्बुपूरक्वथन पिशुनितोत्तालपातालयात्रा । गोत्राद्रि स्फोट शब्द प्रकटित वसुधा मण्डली चण्डयाना, पाप्मना प्रशमनकुशला चक्रस्य धारा वः आत्मनीनं पन्थानं प्रदिश्यात् ॥ २६ ॥

जो चक्रराजकी नेमि अपने प्रकृष्ट प्रकाशसे तारागणकी किरणों को हतप्रभ एवं पीली कर देती है और स्वयं पूर्ण प्रकाशसे आकाशमें स्वच्छन्द विचरती है। सामुद्रिक जलराशिकी उत्तुङ्ग लहरें जिसकी निरंकुश पाताल यात्राकी सूचना देती रहती हैं। कुलाचलके फूटनेका शब्द जिसकी भूमण्डलकी भयंकर यात्राका संकेत करता है। इस प्रकार स्वाश्रित वर्गके पाप शमनमें अतीव कुशल श्री सुदर्शन चक्रकी नेमि धारा आपको अभीष्ट मार्ग प्रदर्शन करे ॥ २६ ॥

यात्रा या त्रातलोका प्रकटितवरुणत्रासमुद्रे·समुद्रे·
सत्त्वासत्त्वासहोष्णा कृतसगरुदगस्पन्ददानाददाना ।
हानिं हा निन्दितानां जगति परिषदां दानवीनां नवीनाम्,
चक्रे चक्रेशनेमिः शममुपहरतु सप्रभाव प्रभावः ॥ २७ ॥

अन्वयः—त्रातलोका या यात्रा, प्रकटितवरुणत्रासमुद्रे समुद्रेयात्राः, आददाना, सत्वासत्वासहोष्णा कृतसगरुदगस्पन्ददाना । जगति निन्दितानां दानवीनां परिषदां नवीनां हानिं चक्रे, सप्रभावप्रभा चक्रेशनेमिः वः शमम् उपहरतु ॥ २७ ॥

जिसकी यात्रासे लोक रक्षण प्राप्त होता है और जिसकी यात्रा समुद्रके विक्षोभ द्वारा वरुण देवको भी, भयसे सशंकित कर देती है । जो अपने असह्य प्रताप द्वारा जड़ एवं चेतनोंको विकल बनाकर सपक्ष पर्वतोंको भी प्रकम्पित कर उन्हें उड़ जानेके लिये विवश कर देती है । इस तरह संसारके निन्दनीय दानव समाजके लिये नित्य प्रति नई-नई हानि करने वाली, अद्भुत प्रभावशाली, वह श्रीसुदर्शन चक्रकी नेमि आपके लिये शान्तिका उपहार दे ॥ २७ ॥

यत्रामित्रान्दिधक्षौ प्रविशति बलिनो धाम निःसीमधाम्नि·
ग्रस्तापस्तापशीर्णैः प्रगुणितसिकतो मौक्तिकैः शौक्तिकेयैः ।
राशिर्वारामपारां प्रकटयति पुनर्वैरिदाराश्रुपूरैः,
वृद्धिं निर्यातिनिर्यापयतु स दुरितान्यस्त्रराजप्रधिर्वः ॥ २८ ॥

अन्वयः—निस्सीमधाम्नि अमित्रान्, दिधक्षौवलिनोधाम प्रविशतिसति ग्रस्तापः (प्रपीताम्बुपूरः) शौक्तिकेयैः मौक्तिकैः, प्रगुणितसिकतः, वारां-राशिः, वैरिदाराश्रुपूरैः, पुनः अपरांवृद्धिं प्रकटयति सोऽस्त्रराजप्रधिः, वः दुरितानि, निर्यापयतु (दूरीकरोतु) ॥ २८ ॥

जो अपने असीम तेजमें, अपने शत्रु दैत्य दानवोंको जला डालने की इच्छासे जब वह बलिके लोकमें प्रवेश करती है, तो उसके तेजसे

समुद्रका जल शुष्क हो जाता है, और तब फिर सीपियोंसे उत्पन्न मोतियोंके समूह बालुकाकी राशिके सदृश दिखाई पड़ने लगते हैं। परन्तु दानवोंके मारे जाने पर रोती हुई उनकी स्त्रियोंके शोकाश्रु जल द्वारा वह समुद्र फिर अगाध जलसे भर जाता है। ऐसे सामर्थ्य वाली श्रीसुदर्शन चक्रकी वह नेमि आपके पापोंको नष्ट कर दें ॥२८॥

कक्ष्यातौल्येन कद्रूतनयफणमणीन्कल्यदीपस्य युञ्जन्-
पातालान्तः प्रपाती निखिलमपि तमः स्वेन धाम्ना निगीर्य ।
दैतेयप्रेयसीनां वमति हृदि हतप्रेयसां भूयसां य-
श्चक्राग्रीयाग्रदेशो दहतु विलसितं भूयसामंहसां वः ॥ २९ ॥

अन्वयः—यः चक्रप्रधिः, पातालान्तः प्रपाती स्वेन धाम्ना निखिलमपि-तमः निगीर्य, कद्रूतनयफणमणीन् कल्यदीपस्य कक्षातौल्येनयुञ्जन् । हत-प्रेयसांदैतेयप्रेयसीनां हृदि वमति । असौ चक्राग्रीयाग्रदेशः (प्रधिः) वः भूयसाम् , अंहसां विलसितं बहुदहतु ॥ २९ ॥

जो चक्रप्रधि पाताल लोकमें प्रवेश करके अपने तेज द्वारा वहांके समस्त अन्धकारको पी डालती है। तथा वहांके सर्पोंके फणकी मणियोंको भी प्रभात कालके निष्प्रभ दीपके सदृश कान्तिहीन कर देती हैं। और फिर उसी अन्धकारको पतियोंके मर जाने पर विधवा बनी, उन्हीं दैत्योंकी स्त्रियोंके हृदयमें वमन भी कर देती है। वह चक्र नेमि आप सबके बहु संख्यक पापोंके विपाकको अच्छी तरह भस्म करदे ॥ २९ ॥

कृष्णाम्भोदस्य भूषा कृतनयनयनव्याहतिर्भार्गवस्य
प्राप्तामावेदयन्ती प्रतिभटसुदृशामुद्भटां वाष्पवृष्टिम् ।
निष्टप्ताष्टापदश्रीः सममरचमूगर्जितैरुज्जिहाना
कीर्तिं वः केतकीभिः प्रथयतु सदृशीं चञ्चला चक्रधारा ॥ ३० ॥

अन्वयः—कृष्णाम्भोदस्य भूषा भार्गवस्य कृतनयनयनव्याहतिः प्रतिभटसुदृशां, उद्भटां वाष्पवृष्टिं, आवेदयन्ती, निष्टप्ताष्टा-

पद्श्रीः, अमरचमूगर्जितैः समम्, उज्जिहाना। सा चञ्चला चक्रधारा केतकीभिः सदृशीं वः कीर्तिंप्रथयतु ॥ ३० ॥

श्यामघनकी छटावाले भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रको अलंकृत करनेवाली एवं परशुरामकी नीति तथा शुक्राचार्यके नेत्रको नष्ट करनेवाली, तथादैत्य दानवोंकी स्त्रियोंके नेत्रोंसे प्रकृष्ट अश्रुधाराको बहाती हुई स्वयं तप्त सुवर्णके सदृश शोभायमान, देव सेनाके घोषके साथ ही साथ जो प्रकट हुआ करती है। वह चञ्चला चक्रधारा केतकीके स्वच्छ पुष्पके समान आपकी कीर्तको विकसित करे ॥ ३० ॥

वप्राणां भेदिनी यः परिणतिमखिलश्लाघनीयां दधानः
क्षुण्णां नक्षत्रमालां दिशिदिशि विकिरन्विद्युता तुल्यकक्ष्यः।
निर्याणेनोत्कटेन प्रकटयति नवं दानवारिप्रकर्षं,
चक्राधीशस्य भद्रो वशयतु भवतां स प्रधिश्चित्तवृत्तिम् ॥ ३१ ॥

अन्वयः—यः वप्राणां भेदिनी, अखिलश्लाघनीयां परिणतिंदधानः। क्षुण्णां नक्षत्रमालां दिशिदिशि विकिरन्, विद्युता तुल्यकक्ष्यः उत्कटेन निर्याणेन नवंदानवारि प्रकर्षं प्रकटयति चक्राधीशस्य सः भद्रःप्रधिः भवतां चित्तवृत्तिं वशयतु ॥ ३१ ॥

जो बड़े बड़े प्राकार एवं तत्सदृश शरीरवाले शत्रुसमूहका विघटन करती और अप्राकृत दिव्य पुरुष विग्रहसे भिन्न विचित्र चक्राकार रूप धारण करती है। तथा नक्षत्र मण्डलको छिन्नभिन्न करके प्रत्येक दिशाओंमें विखेरती हुई अपने स्वयं विद्युत्के सदृश चञ्चल रूपमें प्रकाशित होती है। जो अपने प्रकृष्ट वेगवाले प्रयाणके द्वारा भगवान्के अभिनव महत्वको प्रकट करती है। वह श्रीचक्रराजकी दिव्य नेमि आपकी चित्तवृत्तिको शान्त तथा वशमें करे ॥ ३१ ॥

नाकौकः शत्रुजत्रुत्रुटनविघटितस्कन्धनीरन्ध्रनिर्यन्
नव्यक्रव्यास्रहव्यग्रसनरसलसज्ज्वालजिह्वालवह्निम् ।

यं दृष्ट्वा सांयुगीनं पुनरपि विदधत्याशिषो वीर्यवृद्ध्यै
गीर्वाणा निर्वृणाना वितरतु स जयं विष्णुहेतिप्रधिर्वः ॥ ३२ ॥

अन्वयः—नाकौकः शत्रुजत्रुत्रुटन विघटितस्कन्धनीरन्ध्रनिर्यन् नव्यक्रव्यास्त्रहव्यग्रसनरसलसज्ज्वालजिह्वालवह्निम् । सांयुगीनं यं दृष्ट्वा निर्वृणानागीर्वाणा पुनरपि वीर्यवृद्ध्यै आशिषः विदधति स विष्णुहेतिप्रधिः वः विजयं वितरतु ॥ ३२ ॥

असुरोंके जत्रु (कन्धे) की हड्डीके टूट जानेसे निरन्तर निकलने वाली नवीन मांस युक्त जो शोणित धारा, जिसको हव्यके समान रस युक्त भक्षण करनेसे जिसकी ज्वाला स्वरूप जिह्वा सुपुष्ट हो गई है। एवं संग्राम भूमिमें विराजमान श्रीसुदर्शन भगवानको देखकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक देव मण्डल, जिनकी शौर्यवृद्धिके लिये पुनः पुनः शुभकामना किया करते हैं। उन श्रीचक्रराजकी कल्याण प्रद नेमि, आपको सर्वदा विजय प्रदान करे॥ ३२ ॥

धन्वाध्वन्यस्य धारासलिलमिव धनं दुर्गतस्येव दृष्टि-
र्जात्यन्धस्येव पङ्गोः पदविहृतिरिव प्रीणनी प्रेमभाजाम् ।
पत्युर्माया क्रियायां प्रकटपरिणतिर्विश्वरक्षाक्षमायाम्
मायामायामिनीं वस्त्रुटयतु महती नेमिरस्त्रेश्वरस्य ॥ ३३ ॥

अन्वयः—धन्वाध्वन्यस्य धारासलिलमिव, दुर्गतस्य धनमिव, जात्यन्धस्य दृष्टिरिव, पङ्गोः पदविहृतिरिव, प्रेमभाजां प्रीणनी, पत्युःप्रकटपरिणतिः, अस्त्रेश्वरस्य महतीनेमिः, वः, आयामिनीं मायांत्रुटयतु ॥ ३३ ॥

जो मरुभूमिके पथिकके लिये, प्रवाही जलके सदृश है तथा निर्धनको धन, जन्मान्धको सुन्दर दृष्टि, पंगुको उत्तम पद विहार एवं भक्तोंके लिये आनन्दरूप है। इसी प्रकार जो भगवान्के भी विलास के लिये चक्रस्वरूप है। वह श्री अस्त्रराजकी विचित्र नेमि, आपकी अनर्थप्रद अविद्याको नष्ट करे॥ ३३ ॥

त्राणं याविष्टपानां वितरति च यया कल्प्यते कामपूर्ति-
र्नस्थातुं यत्पुरस्तात्प्रभवति कलयाप्यौषधीनामधीशः ।
उन्मेषो याति यस्या न समयनियतिं साश्रियं वः प्रदेया-
न्न्यक्कृत्य द्योतमाना त्रिपुरहरदृशं नेमिरस्त्रेश्वरस्य ॥ ३४ ॥

या चक्रनेमिः जगतां त्राणं वितरति, यया कामपूर्तिश्च कल्प्यते । यत्पुरस्तात्, औषधीनामधीशः, कलयापि स्थातुं न प्रभवति । यस्याः, उन्मेषः समयनियतिं न याति, त्रिपुर हर दृशंन्यक्कृत्य द्योतमाना सा अस्त्रेश्वरस्य-नेमिः वः श्रियं प्रदेयात् ॥ ३४ ॥

जो विश्वका संरक्षण करती है । जिसके द्वारा उपासकोंकी अभीष्ट सिद्धि होती तथा कामादि शत्रु भी निवृत्त हो जाते हैं । जिसके समक्ष चन्द्रमा क्षणमात्र भी नहीं रुक सकता तथा जिसका उदयकाल अनियत रहता है । इस प्रकार श्रीशंकरजीके तृतीय नेत्रको भी हतप्रभ कर देनेवाली श्रीचक्रराजकी वह नेमि आपको ऐश्वर्य प्रदान करे ॥३४॥

नक्षत्रक्षोदभूतिप्रकरविकिरणश्वेतिताशावकाशा-
जीर्णैः पर्णैरिव द्यां जलधरपटलैश्चूर्णितैरूर्णुवाना ।
आजावाजानवाजानतरिपुजनतारण्यमावर्तमाना-
नेमिर्वात्येव चाक्री प्रणुदतु भवतां संहतं पापतूलम् ॥ ३५ ॥

अन्वयः—नक्षत्रक्षोदभूतिप्रकरविकिरणश्वेतिताशावकाशा, जीर्णैः-पर्णैः चूर्णितैरिव जलधरपटलैः द्यामूर्णुवाना (आच्छादयन्ती) आजौ, आजानवाजानतरिपु जनतारण्यमावर्त्तमाना । चाक्रीनेमिः वात्येव भवतां संहतं पापतूलं प्रणुदतु ॥ ३५ ॥

जिसने नक्षत्ररूप भस्मराशिको बिखेर कर और दिशाओंके मध्य-भागको श्वेतवर्णकर दिया है । तथा अपने वेगके कारण उड़े हुए प्राचीन पत्र स्वरूप, मेघ घटाओंसे आकाश मण्डलको आवृत कररखा है । जो युद्धभूमिमें अपने सहज वेग द्वारा जङ्गलरूप शत्रुओंको झुका झुका—

यं दृष्ट्वा सांयुगीनं पुनरपि विदधत्याशिषो वीर्यवृद्धयै
गीर्वाणा निर्वृणाना वितरतु स जयं विष्णुहेतिप्रधिर्वः ॥ ३२ ॥

अन्वयः—नाकौकः शत्रुजत्रुत्रुटन विघटितस्कन्धनीरन्ध्रनिर्यन् नव्यक्रव्यास्त्रहव्यग्रसनरसलसज्ज्वालजिह्वालवह्निम् । सांयुगीनं यं दृष्ट्वा निर्वृणानागीर्वाणा पुनरपि वीर्यवृद्धयै आशिषः विदधति स विष्णुहेतिप्रधिः वः विजयं वितरतु ॥ ३२ ॥

असुरोंके जत्रु (कन्धे) की हड्डीके टूट जानेसे निरन्तर निकलने वाली नवीन मांस युक्त जो शोणित धारा, जिसको हव्यके समान रस युक्त भक्षण करनेसे जिसकी ज्वाला स्वरूप जिह्वा सुपुष्ट हो गई है। एवं संग्राम भूमिमें विराजमान श्रीसुदर्शन भगवानको देखकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक देव मण्डल, जिनकी शौर्यवृद्धिके लिये पुनः पुनः शुभकामना किया करते हैं। उन श्रीचक्रराजकी कल्याण प्रद नेमि, आपको सर्वदा विजय प्रदान करे॥ ३२ ॥

धन्वाध्वन्यस्य धारासलिलमिव धनं दुर्गतस्येव दृष्टि-
र्जात्यन्धस्येव पङ्गोः पदविहृतिरिव प्रीणनी प्रेमभाजाम् ।
पत्युर्माया क्रियायां प्रकटपरिणतिर्विश्वरक्षाक्षमायाम्
मायामायामिनीं वस्त्रुटयतु महती नेमिरस्त्रेश्वरस्य ॥ ३३ ॥

अन्वयः—धन्वाध्वन्यस्य धारासलिलमिव, दुर्गतस्य धनमिव, जात्यन्धस्य दृष्टिरिव, पङ्गोः पदविहृतिरिव, प्रेमभाजां प्रीणनी, पत्युःप्रकटपरिणतिः, अस्त्रेश्वरस्य महतीनेमिः, वः, आयामिनीं मायांत्रुटयतु ॥ ३३ ॥

जो मरुभूमिके पथिकके लिये, प्रवाही जलके सदृश है तथा निर्धनको धन, जन्मान्धको सुन्दर दृष्टि, पंगुको उत्तम पद विहार एवं भक्तोंके लिये आनन्दरूप है। इसी प्रकार जो भगवान्के भी विलास के लिये चक्रस्वरूप है। वह श्री अस्त्रराजकी विचित्र नेमि, आपकी अनर्थप्रद अविद्याको नष्ट करे॥ ३३ ॥

त्राणं याविष्टपानां वितरति च यया कल्प्यते कामपूर्ति-
र्नस्थातुं यत्पुरस्तात्प्रभवति कलयाप्यौषधीनामधीशः ।
उन्मेषो याति यस्या न समयनियतिं साश्रियं वः प्रदेया-
न्न्यक्कृत्य द्योतमाना त्रिपुरहरदृशं नेमिरस्त्रेश्वरस्य ॥ ३४ ॥

या चक्रनेमिः जगतां त्राणं वितरति, यया कामपूर्तिश्च कल्प्यते । यत्पुरस्तात्, औषधीनामधीशः, कलयापि स्थातुं न प्रभवति । यस्याः, उन्मेषः समयनियतिं न याति, त्रिपुर हर दृशंन्यक्कृत्य द्योतमाना सा अस्त्रेश्वरस्यनेमिः वः श्रियं प्रदेयात् ॥ ३४ ॥

जो विश्वका संरक्षण करती है । जिसके द्वारा उपासकोंकी अभीष्ट सिद्धि होती तथा कामादि शत्रु भी निवृत्त हो जाते हैं । जिसके समक्ष चन्द्रमा क्षणमात्र भी नहीं रुक सकता तथा जिसका उदयकाल अनियत रहता है । इस प्रकार श्रीशंकरजीके तृतीय नेत्रको भी हतप्रभ कर देनेवाली श्रीचक्रराजकी वह नेमि आपको ऐश्वर्य प्रदान करे ॥ ३४ ॥

नक्षत्रक्षोदभूतिप्रकरविकिरणश्वेतिताशावकाशा-
जीर्णैः पर्णैरिव द्यां जलधरपटलैश्चूर्णितैरूर्णुवाना ।
आजावाजानवाजानतरिपुजनतारण्यमावर्तमाना-
नेमिर्वात्येव चाक्री प्रणुदतु भवतां संहतं पापतूलम् ॥ ३५ ॥

अन्वयः—नक्षत्रक्षोदभूतिप्रकरविकिरणश्वेतिताशावकाशा, जीर्णैः-पर्णैः चूर्णितैरिव जलधरपटलैः द्यामूर्णुवाना (आच्छादयन्ती) आजौ, आजानवाजानतरिपु जनतारण्यमावर्त्तमाना । चाक्रीनेमिः वात्येव भवतां संहतं पापतूलं प्रणुदतु ॥ ३५ ॥

जिसने नक्षत्ररूप भस्मराशिको विखेर कर और दिशाओंके मध्य-भागको श्वेतवर्णकर दिया है । तथा अपने वेगके कारण उड़े हुए प्राचीन पत्र स्वरूप, मेघ घटाओंसे आकाश मण्डलको आवृत कररखा है । जो युद्धभूमिमें अपने सहज वेग द्वारा जङ्गलरूप शत्रुओंको झुका झुकाकर

उन्हींके बीचमें स्वतन्त्र संचरण करती है । वह श्रीचक्रराजकी नेमि वात्या (बवण्डर) के सदृश आपके पाप पुञ्जको रुईके समान उड़ा दे ॥ ३५ ॥

क्षिप्त्वा नेपथ्यशाटीमिव जलदघटां जिष्णुकोदण्डचित्रां
तारापुञ्जं प्रसूनाञ्जलिमिव विपुले व्योमरंगे विकीर्य ।
निर्वेदग्लानिचिन्ताप्रभृतिपरवशानन्तरा दानवेन्द्रान्
नृत्यन्नानालयाढ्यं नट इव तनुतां शर्म चक्रप्रधिर्वः ॥ ३६ ॥

अन्वयः—जिष्णुकोदण्डचित्रां जलदघटां, नेपथ्यशाटीमिवक्षिप्त्वावि-पुले व्योमरङ्गे तारापुञ्जं प्रसूनाञ्जलिमिव, विकीर्य; निर्वेदग्लानिचिन्ताप्रभृति परवशान् दानवेन्द्रान्, अन्तरा नानालयाढ्यं नट इव नृत्यन्, चक्रप्रधिःवः शर्मतनुताम् ॥ ३६ ॥

जो इन्द्र धनुषकी तरह चित्र विचित्र जलद घटाको नाट्य मंचके परदेके सदृश खोलकर और विशाल आकाश मण्डलमें तारा पुंजकी पुष्पांजलि बिखेरती रहती है । तथा विषाद-ग्लानि-चिन्ता आदिके वशीभूत बड़े-बड़े दानवेन्द्रोंके मध्यमें विविध प्रकारकी नाट्य कलामें निपुण नटके सदृश नृत्य किया करती है । वह श्रीचक्रेश भगवान्की नेमि आपके सुखको विस्तृत करे ॥ ३६ ॥

दौर्गत्यप्रौढतापप्रतिभटविभवा वित्तधाराः सृजन्ती
गर्जन्ती चीत्क्रियाभिर्ज्वलदनलशिखोद्दामसौदामनीका ।
अव्यात्क्रव्याद्वधूटीनयनजलभरैर्दिक्षु नव्याननाव्यान्-
पुष्यन्ती सिन्धुपूरान्रथचरणपतेर्नेमिकादम्बिनी वः ॥ ३७ ॥

अन्वयः—दौर्गत्यप्रौढतापप्रतिभटविभवा, वित्तधाराः सृजन्ती चीत्क्रियाभिः गर्जन्ती, ज्वलदनलशिखोद्दामसौदामनीका । क्रव्याद्वधूटीनयन जलभरै, नव्यान्, अनाव्यान् सिन्धुपूरान् दिक्षु पुष्यन्ती, रथ चरणपतेः नेमिकादम्बिनीवोऽव्यात् ॥ ३७ ॥

जो दरिद्रताके प्रकृष्ट दुःखको निराकरण करनेकी शक्तिसे सम्पन्न है और विविध धनधान्यकी वर्षा किया करती है। जिसकी गर्जना, भयंकर चीत्कारके साथ होती है। जाज्वल्यमान अग्निज्वाला ही जिसकी चमकीली बिजली है और जो दैत्योंकी विधवा स्त्रियोंके शोकाश्रु द्वारा नये नये अगाध समुद्र प्रवाहको प्रत्येक दिशाओंमें बढ़ाती रहती है। वह चक्रनेमि स्वरूप मेघमाला आपकी रक्षा करे ॥ ३७ ॥

संदोहं दानवानामजसमजमिवालभ्य जाज्वल्यमाने-
वह्नावह्नाय जुह्वत्त्रिदशपरिषदे स्वस्वभागप्रदायी ।
स्तोत्रैर्ब्रह्मादिगीतैर्मुखरपरिसरंश्लाघ्यशस्त्रप्रयोगं-
प्राप्तः संग्रामसत्रंप्रधिरसुररिपोः प्रार्थितं प्रस्नुतां वः ॥ ३८ ॥

अन्वयः—ब्रह्मादिगीतैः, स्तोत्रैः मुखरपरिसरं श्लाघ्यशस्त्रप्रयोगं, संग्राम सत्रं प्राप्तः। अजसमजमिव दानवानां संदोहमालभ्य जाज्वल्यमाने वह्नौ, अह्नाय (शीघ्रं) जुह्वत् त्रिदशपरिषदे, स्वस्वभागप्रदायी, असुररिपोः प्रधिः वः प्रार्थितं प्रस्नुताम् ॥ ३८ ॥

ब्रह्मा रुद्र प्रभृति देवोंसे गाये गये एवं सुन्दर शब्दावलीसे प्रशंसित तथा प्रख्यात शस्त्र प्रयोग वाले संग्राम यज्ञमें प्रवेशकर जो दानव सैन्यको बकरोंके झुण्डकी तरह काट-काटकर, प्रचण्ड अग्नि ज्वालामें उनकी अतिशीघ्र आहुति देती हुई समस्त देवताओंको यथायोग्य उनका भाग प्रदान किया करती है। वह श्रीसुदर्शन भगवान्‌की चक्रनेमि आपके लिये प्रार्थित पदार्थ सम्पन्न करे ॥ ३८ ॥

॥ इतिनेमिवर्णनम् ॥

अथार वर्णनम्

उत्पातालातकल्पान्यसुरपरिषदामाहवप्रार्थिनीना-
मध्वानध्वावबोधक्षपणचणतमः क्षेपदीपोपमानि ।
त्रैलोक्यागारभारोद्वहनसहमणिस्तम्भसंपत्सखानि-
त्रायन्तामन्तिमायां विपदि सपदि वोऽराणि सौदर्शनानि ॥ ३९ ॥

अवन्यः—आहवप्रार्थिनीनामसुरपरिषदाम्, उत्पातालातकल्पानि अध्वानध्वावबोधक्षपणचणतमः क्षेपदीपोपमानि, त्रैलोक्यागारभारोद्वहनसहमणिस्तम्भसम्पत्सखानि, सौदर्शनानि अराणिवः अन्तिमायां विपदि सपदि त्रायन्ताम् ॥ ३९ ॥

संग्रामके लिये उत्सुक दैत्य समूहके विनाशार्थ, जो उत्पात-सूचक, अलात (उल्मुक) के समान हैं। एवं मार्ग तथा अमार्गके अप्रकाशक घन अन्धकारकी निवृत्तिके लिये दीप सदृश हैं। तथा त्रिलोक रूप विशाल भवनके भार वहन करनेमें जो मणि स्तम्भकी सामर्थ्य रखते हैं। इस प्रकारके श्री सुदर्शन भगवान्के अर समूह, प्राणान्तके समय आनेवाली आपकी अन्तिम विपत्तिके समय अतिशीघ्र परित्राण करें ॥ ३९ ॥

ज्वालाजालप्रवालस्तबकितशिरसोनाभिमावालयन्त्यः
सिक्ता रक्ताम्बुपूरैः शकलितवपुषां शात्रवानीकिनीनाम् ।
चक्राक्रीडप्ररूढाभुजगशयभुजोपघ्ननिघ्नप्रचारा-
पुष्प्यन्त्यः कीर्तिपुष्पाण्यरकनकलताः प्रीतये वः प्रथन्ताम् ॥ ४० ॥

अन्वयः—चक्राक्रीडप्ररूढा नाभिमावालयन्त्यः, शकलितवपुषां शात्रवानीकिनीनाम्, रक्ताम्बुपूरैः सिक्ता। भुजगशयभुजोपघ्ननिघ्नप्रचारा, ज्वाला जालप्रवालस्तबकितशिरसः, कीर्तिं पुष्पाणि पुष्प्यन्त्यः, अरकनकलताः, वः प्रीतयेप्रथन्ताम् ॥ ४० ॥

जो चक्रस्वरूप उद्यानकी नाभिरूप आलवाल (क्यारी) में उत्पन्न हुई हैं। तथा युद्धमें छिन्न भिन्न शरीर वाले दैत्य सेनाके रक्त प्रवाह द्वारा सिञ्चित की गई हैं। शेषशायी भगवानके भुजदण्डके आलम्बन द्वारा जो संचरण किया करती हैं। जिनका अग्रभाग ज्वाला समूह रूप प्रवालके स्तवक (गुच्छे) से सुशोभित रहा करता है। इस प्रकार कीर्तिरूप पुष्पोंको विकसित करनेवाली श्रीसुदर्शन राजकी अररूप स्वर्ण लतायें आपकी प्रसन्नताके लिये प्रवृद्ध होती रहें ॥४०॥

ज्वालाजालाब्धिमुद्रंक्षितिवलयमिवाबिभ्रतीनेमिचक्रम्
नागेन्द्रस्येव नाभेः फणपरिषदिव प्रौढरत्नप्रकाशा।
दत्तां वो दिव्यहेतेर्मतिमरविततिः ख्यातसाहस्रसंख्या-
संख्यावत्संङ्घचित्तश्रवणहरगुणस्यन्दिसंदर्भगर्भाम् ॥ ४१ ॥

अन्वयः—ज्वालाजालाब्धिमुद्रं नेमिचक्रं क्षितिवलयमिव बिभ्रती, नागेन्द्रस्य, इव, नाभेः फणपरिषत्, इव, ख्यात साहस्रसंख्या, प्रौढरत्नप्रकाशा, दिव्यहेतेः, अरविततिः, संख्यावत्सङ्घचित्तश्रवणहरगुणस्यन्दिसन्दर्भ गर्भां वः, मतिं दद्यात् ॥ ४१ ॥

जो प्रकाशमान ज्वाला समूहात्मक समुद्ररूप सीमा चिह्नसे विशिष्ट नेमिचक्रको भूवलयके सदृश धारण करती है। तथा जो कुण्डली भूतशेषनाग के सदृश एवं उनके फण समूहके समान स्थित है। जो सहस्र संख्यासे सुशोभित होती हुई सुन्दर रत्न प्रभासे प्रकाशित रहती है। वह चक्रेशकी अर परम्परा ज्ञानियोंके भी चित्त एवं श्रवणको आकृष्ट करने वाले दिव्य गुणोंकी प्रवाहमयी बुद्धि आपको प्रदान करे ॥ ४१ ॥

अक्लेशोपक्रमाणां बहुविधविमतक्षोदसंमोदितानां,
सेवायै देवतानांदनुजकुलरिपोः पिण्डिकाद्यंगभाजाम्।
तत्तद्धामान्तसीमाविभजनविधये मानदण्डायमाना-
भूमानं भूयसां वो दिशतु दशशती भास्वराणामराणाम् ॥ ४२ ॥

अन्वयः--बहुविधविमतक्षोदसंमोदितानां, दनुजकुलरिपोः पिण्डिकाद्यङ्गभाजाम्, ब्रह्मेशोपक्रमाणाम्, देवतानाम्, तत्तद्धामान्त सीमाविभजनविधये मानदण्डायमाना, भूयसां भास्वराणामराणां दशशती वो भूमानं दिशतु ॥ ४२ ॥

जिनका चित्त अनेक प्रकारके शत्रुवर्गको निरस्त कर देनेसे सुप्रसन्न रहा करता है तथा दैत्योंके संहारक श्रीसुदर्शन भगवानके नाभि आदि अंगोंके सेवक ब्रह्मा प्रभृति देवताओंके निवास स्थानकी सीमा विभागके निर्णयमें जो मानदण्डका कार्य करते हैं। एवं भूत दिव्य प्रकाशसे सम्पन्न श्रीचक्रराजके सहस्रों अर आपके महत्वको बढ़ावें ॥ ४२ ॥

ज्वालाकल्लोलमालानिबिडपरिसरां नेमिवेलां दधाने-
पूर्वेणाक्रान्तमध्ये भुवनमयहविर्भोजिना पूरुषेण ।
प्रस्फूर्जत्प्राज्यरत्ने रथपदजलधावेधमानैः स्फुलिंगैः
भद्रं वो विद्रुमाणां श्रियमरविततिर्विस्तृणाना विधत्ताम् ॥ ४३ ॥

अन्वयः—ज्वालाकल्लोलमाला निबिड परिसरां, नेमिवेलांदधाने, भुवन, मयहविर्भोजिना पूरुषेण, आक्रान्तमध्ये, प्रस्फूर्जत्प्राज्यरत्ने रथपद जलधौ-अरविततिः, एधमानैः स्फुलिङ्गैः विद्रुमाणां श्रियं विस्तृणाना वः भद्रं विधत्ताम् ॥ ४३ ॥

जिसने अपनी ज्वालाओंकी पंक्तियोंसे घनी भूत प्रदेशवाले नेमि रूप तटको धारण कर रखा है और ब्रह्माण्ड स्वरूप हव्यके भोक्ता आदि पुरुष श्रीसुदर्शन भगवान जिसके मध्य भागमें अधिष्ठित हैं। तथा जो चमकीले विशिष्ट रत्नोंसे भरपूर है। उस श्रीसुदर्शन रूप समुद्रमें अरोंकी पंक्तियां अपने प्रवृद्ध स्फुलिंगोंसे प्रवाल (मूँगा) समूह की शोभाको प्रकट करती हुई आपको कल्याण प्रदान करें ॥ ४३ ॥

नासीरस्वैरभग्नप्रतिभटरुधिरासारधारावसेका-
नेकान्तस्मेरपद्मप्रकरसहचरच्छायया प्राप्य नाभ्या ।
मुक्तानीवांकुराणि स्फुरदनलशिखादर्शितप्राक्प्रवाला-
न्यव्याघातेन भव्यं प्रददतु भवतां दिव्यहेतेरराणि ॥ ४४ ॥

अन्वयः—नासीरस्वैरभग्नप्रतिभट रुधिरासारधारावसेकान्, प्राप्य एकान्त स्मेरपद्मप्रकरसहचरच्छायया मुक्तानि, अङ्कुराणि इव स्फुरदनलशिखादर्शित प्राकप्रवालानि, दिव्यहेतेः अराणि भवताम्. अव्याघातेन भव्यं प्रददतु॥४४॥

जो निर्लज्जतापूर्वक भगे हुए प्रतिभट, सेनापतियोंकी रुधिर धारा से सिञ्चित होकर, एवं नियमसे प्रफुल्लित कमल पुंजके सदृश कान्ति वाली नाभिरूप (क्यारी) से उत्पन्न, होनेवाले अंकुरके सदृश प्रतीत होते हैं। तथा प्रज्वलित अग्नि शिखाकी तरह प्रकाशित रक्त किसलय को धारण करने वाले हैं। ऐसे श्रीसुदर्शन चक्रके अर समूह आप सबको निर्विघ्न मंगल प्रदान करें॥ ४४ ॥

दावोल्कामण्डलीव द्रुमगणगहने बाडवस्येव वह्ने-
र्ज्वालावृद्धिर्महाब्धौ प्रवयसि तमसि प्रातरर्कप्रभेव ।
चक्रे या दानवानां हयकरटिघटासंकटे जाघटीति-
प्राज्यं सा वः प्रदेयात्पदमरपरिषत्पद्मनाभायुधस्य ॥ ४५ ॥

अन्वयः—या सुदर्शनारपरिषत्, द्रुमगणगहने, दावोल्कामण्डलीव, महाब्धौ वाडवस्यवह्नेः ज्वालावृद्धिरिव, प्रवयसितमसिप्रातरर्क प्रभा, इव, हयकरटिघटासंकटे दानवानां चक्रे, जाघटीति (चेष्टते) पद्मनाभायुधस्य सा अरपरिषत् भवताम्, आज्यं पदं प्रदेयात् ॥ ४५ ॥

जो वृक्ष समूहके दुःप्रवेश सघन वनमें दावानल ज्वालाके समान और समुद्रमें वाडवाग्नि ज्वालाकी तरह तथा प्रकृष्ट अन्धकारमें प्रातः कालीन सूर्य प्रभाके सदृश प्रतीत होती है एवं जो अश्व तथा गजेन्द्रों

से परिपूर्ण दानव सैन्यको आक्रान्त करके त्रस्त करती रहती है। वह श्रीसुदर्शन भगवान्की, अर पंक्ति आपको श्रेष्ठपद प्रदान करे॥ ४५॥

तापाद्दैत्यप्रतापातपसमुपचितात्त्रायमाणं त्रिलोकीं-
लोलैर्ज्वालाकलापैः प्रकटयदभितश्चीनपट्टाञ्चलानि।
छत्राकारं शलाका इव कनककृताः शौरिदोर्दण्डलग्नं
भूयासुर्भूषयन्त्यो रथचरणमरस्फूर्तयः कीर्तये वः ॥४६॥

अन्वयः—दैत्यप्रतापातपसमुचितात् तापात् त्रिलोकीं त्रायमाणं, अभितः लोलैः ज्वालाकलापैः चीनपट्टाञ्चलानि प्रकटयन्, शौरिदोर्दण्डलग्नं छत्राकारं रथचरणं भूषयन्त्य- कनककृताः शलाका इव प्रतीयमानाः, अर-स्फूर्तयः, वः कीर्तये भूयासुः ॥ ४६ ॥

दैत्य दानवोंके प्रतापी तेजकी ज्वालासे आक्रान्त त्रिलोकके रक्षणमें तत्पर, तथा अतीव चंचल एवं प्रसरणशील ज्वाला समूह द्वारा छत्रमें लगी हुई चमकीली झालरोंके सौन्दर्यको जो सर्वदा प्रकट करती रहती हैं। भगवान्के भुजदण्डमें विराजमान श्रीसुदर्शनचक्रको छत्रके रूपमें सुशोभित करती हुई सुवर्णकी शलाकाओंकी तरह सुन्दर लगनेवाली उन अर पंक्तियोंका प्रकाश आपके यशको बढ़ावे॥ ४६॥

नाभीशालानिखातां नहनसमुचितां वैरिलक्ष्मीवशानां-
संयद्वारीहृतानां समनुविदधती काञ्चनालानपंक्तिम्।
राज्या च प्राज्यदैत्यव्रजविजयमहोत्तम्भितानां भुजानां-
तुल्या चक्रारमाला तुलयतु भवतां तूलवच्छत्रुलोकम् ॥ ४७ ॥

अन्वयः—संयद्वारीहृतानां, वैरिलक्ष्मीवशानां, नहनसमुचितां नाभिशाला-निखातां, काञ्चनालानपंक्तिं, समनुविदधतीं प्राज्यदैत्यव्रजविजयमहोत्तम्भि-तानां भुजानां राज्यातुल्या, चक्रारमाला, भवतां शत्रुलोकं तूलवत् तुल-यतु ॥ ४७ ॥

जो संग्राम स्वरूप वारी (गजबन्धिनी) गर्तसे निकली हुई शत्रु सम्पत्ति रूप हस्तिनीके बन्धनके योग्य, नाभिरूप गजशालामें अच्छी तरह गाड़ी हुई सुवर्णमय गजबन्धन स्तम्भ पंक्तिके सदृश प्रतीत होती है। तथा बड़े-बड़े भयंकर दैत्य समूह पर विजय प्राप्त कर लेने के महोत्सवसे उन्मत्त भुजदण्डोंकी पंक्तिके जो सदृश जो दिखाई पड़ती है श्रीसुदर्शन चक्रके, अरोंकी वह माला आपके शत्रु समूहको तूल (रुई) के सदृश निर्मूल कर दे ॥ ४७ ॥

आनेमेश्चक्रवालात्त्विषइव वितताः पिण्डिकाचण्डदीप्ते-
र्दीप्ता दीपा इवाराद्गहनरणतमीगाहिनः पूरुषस्य ।
शाणे रेखायितानां रथचरणमये शत्रुशौण्डीर्यहेम्नां
रेखाः प्रत्यग्रलग्ना इव भुवनमरश्रेणयः प्रीणयन्तु ॥ ४८ ॥

अन्वयः—आनेमेश्चक्रवालात्, त्विषइव वितताः पिण्डिकाचण्डदीप्तेः-गहनरणतमीगाहिनः पूरुषस्य, आरात् प्रदीप्ताः दीपा इव रथचरणमयेशाणे रेखायितानाम्, शत्रुशौण्डीर्यहेम्नां प्रत्यग्रलग्नाः रेखाइव (स्थिताः) अर-श्रेणयः भुवनं प्रीणयन्तु ॥ ४८ ॥

जो नेमिरूप लोकालोक पर्वत पर्यन्त, नाभि स्वरूप सूर्यकी किरणों के सदृश व्याप्त हैं। तथा दुष्प्रवेश संग्राम रूप अँधेरी रात्रिमें संचरण करने वाले श्रीसुदर्शन पुरुषके समीपमें अन्धकार विघटनार्थ प्रदीप्त दीपकी ज्वालाका कार्य करती है। एवं चक्र नामक शाण (कसौटी) के ऊपर संघर्षित शत्रुवर्गके मदरूप सुवर्णकी रेखाओंके समान चमकती रहती हैं। इस प्रकार चक्रकी अर श्रेणियां समस्त लोकको सुप्रसन्न करें ॥ ४८ ॥

दीप्तैरर्चिःप्ररोहैर्दलवति विधृते बाहुनालेन विष्णो-
रुद्यत्प्रद्योतनाभं प्रथयति पुरुषं कर्णिकावर्णिकायाम् ।
चूडालं वेदमौलिं कलयति कमले चक्रनाम्नोपलक्ष्ये-
लक्ष्मीं स्फारामराणि प्रतिविदधतु वः केसरश्रीकराणि ॥ ४९ ॥

अन्वयः—दीप्तैरार्चिःप्ररोहैर्दलवति, विष्णोर्बाहुनालेन विधृते, उद्यत्प्रद्योत-नाभं पुरुषं कर्णिकावर्णिकायां प्रथयति । चूडालं वेदमौलिकलयति, चक्रनाम्नो-पलक्ष्येकमले केसरश्रीकराणि अराणि वः स्फारां (प्रकाशमानां) श्रियं प्रति-विदधतु ॥ ४९ ॥

प्रकाशमान ज्वालाके अंकुर पुञ्ज जिसके पत्रके सदृश हैं और जो भगवान विष्णुके बाहुरूपी नालमें सम्बद्ध हैं । उदयकालीन सूर्यप्रभा के समान तेजस्वी श्रीसुदर्शन पुरुषमें जो कार्णिकाके आकारमें प्रका-शित होते हैं । शास्त्र शिरोमणि वेदान्त तत्व जिसके परिमलके समान हैं । ऐसे कमल पुष्पके केसरके सदृश सुशोभित श्रीसुदर्शन पुरुषके अर समूह आपको प्रकाशमान लक्ष्मी प्रदान करें ॥ ४९ ॥

धातुस्यन्दैरमन्दैः कलुषितवपुषो निर्झराम्भःप्रपाता-
नर्चिष्मत्या स्वमूर्त्या रथचरणगिरेर्नेमिनाभीतटस्य ।
व्याकुर्वाणारपंक्तिर्वितरतु विभुताविस्तृतिं वित्तकोटी-
कोटीरच्छत्रपीठीकटककरिघटाचामरस्रग्विणीं वः ॥ ५० ॥

अन्वयः—नेमिनाभीतटस्य रथचरणगिरेः अरपंक्तिः अमन्दैः धातुस्यन्दैः कलुषितवपुषोनिर्झराम्भः प्रपातान्; अर्चिष्मत्यास्वमूर्त्याव्याकुर्वाणा; वित्त-कोटीकोटीरछत्रपीठीकटककरिघटाचामरस्रग्विणीं विभुताविस्तृतिं वः वित-रतु ॥ ५० ॥

जिस सुदर्शन रूप पर्वतके नेमि और नाभि, ये दोनों तट जैसे हैं । जिसकी अर पंक्ति बड़े वेग वाले गैरिक धातु प्रवाहके संसर्ग द्वारा रक्तवर्णको प्राप्त हो गये निर्झर जल प्रवाहोंको अपनी प्रदीप्त कान्ति द्वारा जपा पुष्पके सदृश, विस्तृत रूपमें व्यक्त करती हैं । वह आपके लिये कोटि-कोटि द्रव्य-छत्र-दिव्य सिंहासन और सुवर्ण रत्न तथा गजसमूह एवं चमर-माला आदि विविध वैभव राशि वित-रण करे ॥ ५० ॥

॥ इत्यरवर्णनम् ॥

अथ नाभिवर्णनम्

ऐक्येन द्वादशानामशिशिरमहसां दर्शयन्ती प्रवृत्तिं-
दत्तः स्वर्लोकलक्ष्म्यास्तिलक इव मुखे पद्मरागद्रवेण ।
देयाद्दैतेयदर्पक्षतिकरणरणप्रीणिताम्भोजनाभि-
र्नाभिर्नाभित्वमुर्व्याः सुरपतिविभवस्पर्शि सौदर्शनी वः ॥ ५१ ॥

अन्वयः—द्वादशानामशिशिरमहसाम्, ऐक्येन सञ्जातां प्रवृत्तिंदर्शयन्तीमिव दैतेयदर्पक्षतिकरणरणप्रीणिताम्भोजनाभिः, स्वर्लोक लक्ष्म्याः मुखे पद्मराग द्रवेण दत्तस्तिलक इवस्थिता । सौदर्शनी नाभिः सुरपति विभव स्पर्शि उर्व्याउर्व्याः, नाभित्वं (नायकत्वं) वः देयात् ॥ ५१ ॥

जो द्वादश सूर्योंके सम्मिलित तेजकी विचित्र प्रवृत्तिको प्रकाशित करती है अर्थात् जिसके समक्ष बारहों सूर्योंका सम्मिलित प्रकाश भी मलिन हो जाता है । तथा दैत्योंके अभिमानको विनष्ट करनेके लिये प्रधान साधन बनकर जो भगवानको प्रसन्न किया करती है । एवं जो देवलक्ष्मीके दिव्य मुखपर पद्मराग माणिक्यके द्रवरससे किये गये तिलकके समान सुशोभित होती है । वह श्रीसुदर्शन भगवानकी नाभि आपके लिये इन्द्रके विभवको भी हतप्रभ करनेवाला भूमण्डलका साम्राज्य समर्पण करे ॥ ५१ ॥

शस्त्रश्यामे शतांगक्षितिभृति तरलैरुत्तरंगेतुरंगै-
स्त्वंगन्मातंगनक्रे कुपितभटमुखच्छायमुग्धप्रवाले ।
अस्तोकं प्रस्नुवाना प्रतिभटजलधौ पाटवं बाडवस्य-
श्रेयो वः संविधत्तां श्रितदुरितहरा श्रीधरास्त्रस्य नाभिः ॥ ५२ ॥

अन्वयः—शस्त्रश्यामे शताङ्गक्षितिभृतितरलैः तुरङ्गैःउत्तरङ्गे, त्वङ्गन्मातङ्गनक्रे, कुपितभटमुखच्छायमुग्धप्रवाले, प्रतिभटजलधौ, बाडवस्य अस्तोकं पाटवं-प्रस्नुवाना (दुहाना) श्रितदुरितहरा, श्रीधरास्त्रस्यनाभिः वः श्रेयः संविधत्ताम् ॥ ५२ ॥

शस्त्र संचार की छटासे श्यामवर्णके प्रतीत होनेवाले शतांग अर्थात् रथ समूह जिसमें पर्वतके सदृश हैं और चञ्चल अश्व समूह लहर जैसे, तथा मत्त गजेन्द्रोंकी घटायें ग्राहोंके सदृश दिखाती हैं। क्रोधाविष्ट शूर वीरोंके मुखकी लालिमा जहां पर प्रवालकी तरह चमकती रहती है। इस प्रकार शत्रुवोंके महा सैन्यरूप समुद्रमें वडवा नलके उत्कट शौर्यको प्रगट करनेवाली तथा अपने आश्रित वर्गके पापों को शमन करने वाली श्रीसुदर्शन भगवानकी पवित्र नाभि आपको कल्याण प्रदान करे॥ ५२ ॥

ज्वालाचूडालकालानलचलनसमाडम्बरा सांपरायं-
यासावासाद्य माद्यत्सुरसुभटभुजास्फोटकोलाहलाढ्यम् ।
दैत्यारण्यं दहन्ती विरचयति यशोभूतिशुभ्रां धरित्रीं-
सा वश्चक्रस्य नक्रस्यदमृदितगजत्रायिणी नाभिरव्यात् ॥ ५३ ॥

अन्वयः—या, असौ नाभिः माद्यत्सुरसुभटभुजास्फोटकोलाहलाढ्यं युद्धमासाद्य ज्वालाचूडालकालानलचलनसमाडम्बरा। दैत्यारण्यं दहन्ती धरित्रीं यशोभूतिशुभ्रां विरचयति नक्रस्यदमृदित गजत्रायिणी सा चक्रस्य नाभिः वः अव्यात् ॥ ५३ ॥

जो मदोन्मत्त देव योद्धाओंकी, भुजाओंकी ताल ध्वनिसे व्याप्त, युद्ध स्थलमें जाकर, प्रलयानलके समान धधकने वाली, अपनी जाज्वल्यमान ज्वाला शिखाओंके द्वारा दैत्य वृन्दरूप जंगलको जलाती हुई, और अपने यशकी विभूति द्वारा, भूमण्डलको शुभ्रवर्णसे अभिषिक्त कर देती है। वह ग्राहसे ग्रस्त गजेन्द्रका परित्राण करनेवाली श्रीचक्रराजकी नाभि आप सबका संरक्षण करे॥ ५३ ॥

विन्दन्ती सांध्यमर्चिर्विदलितवपुषः प्रत्यनीकस्य रक्तैः
स्फायन्नक्षत्रराशिर्दिशि दिशि कणशः कीकसैः कीर्यमाणैः ।
नाकौकःपक्ष्मलाक्षीनवमदहसितच्छायया चन्द्रपादान्-
गाथांगी विस्तृणाना रचयतु कुशलं पिण्डिकायामिनी वः ॥ ५४ ॥

अन्वयः—विदलितवपुषः प्रत्यनीकस्य रक्तैः सान्ध्यम् अर्चिः विन्दन्ती, दिशिदिशिकणशः कीर्यमाणैः कीकसैः (अस्थिभिः) स्फायन् (प्रकाशमानः) नक्षत्रराशिः। नाकौकः पक्ष्मलाक्षी नवमदहसितच्छायया चन्द्रपादान् विस्तृणाना राथाङ्गी पिण्डिकायामिनी वः कुशलं रचयतु ॥५४॥

अनेक प्रकारके प्रहारोंसे क्षत विक्षत शरीरवाले शत्रु सैनिकोंसे निकलती हुई रुधिर धाराके द्वारा जो सायं कालीन रक्तिम कान्ति प्रकट किया करती है। तथा प्रत्येक दिशाओंमें बिखरे हुए अस्थि समूह जिसमें तारागणके समान चमकते रहते हैं। देवांगनाओंके अभिनव मदपूर्ण हास्य कान्तिकी धवलिमासे जो चन्द्र किरणोंकी शोभा विखेरती रहती है। एवं भूत रात्रिके स्वरूपको धारण करनेवाली वह श्रीसुदर्शन चक्रकी नाभि आपको सकुशल रखे ॥ ५४ ॥

निःसीमं निस्सृताया भुजधरणिधराघाटतः कैटभारे-
राशाकूलंकषर्द्धेरहितबलमहाम्भोधिमासादयन्त्याः ।
चक्रज्वालापगायाश्चलदरलहरीमालिकादन्तुराया-
विभ्रत्यावर्तभावं भ्रमयतुभुवने पिण्डिका वः प्रशस्तिम् ॥ ५५ ॥

अन्वयः—कैटभारेः भुजधरणिधराघाटतः निस्सीमं निस्सृतायाः आशाकूलं कषर्द्धेः, चलदरलहरीमालिकादन्तुरायाः, अहितबलमहाम्भोधिमासादयन्त्याः चक्रज्वालापगायाः, आवर्तभावं बिभ्रती पिण्डिका वः प्रशस्तिं भुवने भ्रमयतु ॥ ५५ ॥

कैटभ दैत्यको मारने वाले भगवानके पर्वताकार भुज प्रदेशसे जो अगाध रूपमें प्रवाहित होती है और जिसमें दिशारूपी तटोंको तोड़ डालनेकी पूर्ण शक्ति है। जिसमें चंचल अर पंक्ति रूप लहरोंका पूर आया करता है तथा जो शत्रु सैन्यरूप महा समुद्रमें जाकर प्रवेश करती है। इस प्रकार चक्रराजकी ज्वालारूप नदीमें भँवरकी तरह सुशोभित होनेवाली वह श्रीसुदर्शन भगवानकी नाभि आपके यशको विश्वमें विकसित करे ॥ ५५ ॥

पाणौ कृत्वाऽऽहवाग्रे प्रतिभटविजयोपार्जितां वीरलक्ष्मी-
मानीतायास्ततोऽस्याः स्वसविधमसुरद्वेषिणा पूरुषेण ।
प्रासादं वासहेतोर्विरचितमरुणै रश्मिभिः सूचयन्ती-
नाभिर्वो निर्मिमीतां रथचरणपतेर्निर्वृतिं निर्विघाताम् ॥ ५६ ॥

अन्वयः—प्रतिभटविजयोपार्जितां वीरलक्ष्मीं, आहवाग्रे पाणौ कृत्वा स्वसविधम् (स्वसमीपम्) आनीतायाः अस्याः (वीरश्रियः) वासहेतोः, असुरद्वेषिणा पूरुषेण (सुदर्शनेन) अरुणैः रश्मिभिः विरचितं प्रासादं सूचयन्ती रथचरणपतेः, नाभिः वः निर्विघातां निर्वृत्तिं (आनन्दं) निर्मिमीताम् ॥ ५६ ॥

विपक्षी योद्धाओं पर विजय प्राप्त कर सम्पादित की हुई वीर लक्ष्मीको युद्ध वेदी पर अपने हस्तगत करके, उसके निवास स्थानके लिये श्रीसुदर्शन पुरुषकी अरुण किरणों द्वारा बने हुए भव्य भवनके समान प्रतीत होने वाली श्रीचक्रराजकी नाभि आप सबके लिये निर्विघ्न आनन्द सम्पादन करे ॥ ५६ ॥

डिण्डीरापाण्डुगण्डैररियुवतिमुखैः पिण्डिका कृष्णहेते-
रुच्चण्डाश्रुप्रवर्षैरुपरततिलकैरुक्तशौण्डीर्यचर्या ।
द्वित्रग्रामाधिपत्यद्रुहिणमदमषीदूषिताक्षक्षमाभृत्-
सेवाहेवाकपाकं शमयतु भवतां कर्म शर्मप्रतीपम् ॥ ५७ ॥

अन्वयः—डिण्डीरापाण्डुगण्डैः उच्चण्डाश्रुप्रवर्षैः, उपरततिलकैः, अरियुवतिमुखैः उक्तशौण्डीर्यचर्या, कृष्णहेतेः पिण्डिका, द्वित्रग्रामाधिपत्यद्रुहिणमदमषीदूषिताक्षक्षमाभृत्, सेवाहेवाकपाकं शर्मप्रतीपं, कर्म, भवतां शमयतु ॥ ५७ ॥

जिनके कपोल शुष्क होकर फेन पिण्डके सदृश श्वेत हो गये हैं तथा निरन्तर अश्रु प्रवाह होनेसे मुखके अलंकार रूप तिलक भी धो उठे हैं। इस प्रकारकी शत्रु वर्गकी स्त्रियों द्वारा प्रशंसित महिमावाली

श्रीकृष्ण चन्द्रकी वह चक्र नाभि, अति स्वल्प दो तीन ग्रामके ही अधिपति होने पर भी अपनेको ब्रह्माण्ड नायक मान बैठे और जिनकी इन्द्रियोंमें कलुषित भाव भर उठे हैं। उन उन्मत्त नरेशोंके शुश्रूषा रूप दुःखदायी कर्मोंको प्रशान्त कर दें ॥ ५७ ॥

पर्याप्तामुन्नतिं याप्रथयति कमलं या तिरोभाव्य भाति-
स्स्रष्टुः सृष्टेर्दवीयः कुवलयमहितं या बिभर्ति स्वरूपम् ।
भूम्ना स्वेनान्तरिक्षं कवलयति च या सा विचित्रा विधत्ताम्-
दैतेयारातिनाभिर्द्रविणपतिपदद्रोहिणीं संपदं वः ॥ ५८ ॥

अन्वयः—या पर्याप्तामुन्नतिं प्रथयति, या कमलं तिरोभाव्य भाति। या स्रष्टुः सृष्टेर्दवीयः कुवलयमहितं स्वरूपं बिभर्ति। या स्वेन भूम्ना अन्तरिक्षं कवलयति। सा विचित्रा दैतेयारातिनाभिः वः द्रविणपतिपदद्रोहिणीं संपदं विधत्ताम् ॥ ५८ ॥

जो पर्याप्त उन्नति प्रकट करती है और अपने उत्कट सौन्दर्यसे कमलकी शोभाको भी तिरस्कृत करके सुशोभित होती है। जो ब्रह्मदेवके ब्रह्मलोकसे अति दूरस्थ भूमण्डल द्वारा प्रशंसित दिव्य आकार धारण करती है तथा अपनी व्यापकतासे आकाशमण्डलको भी माप लेती है। इस प्रकार अति विलक्षण स्वरूप सम्पन्न वह श्रीचक्रेशकी नाभि, कुवेरके वैभवको भी तिरस्कृत करने वाला, विशिष्ट वैभव आपके लिये सम्पन्न करे ॥ ५८ ॥

वाणीवाङ्गैश्चतुर्भिः सदसि सुमनसां द्योतमानस्वरूपा-
वाह्वन्तस्था मुरारेरभिमतमखिलं श्रीरिव स्पर्शयन्ती ।
दुर्गेवोग्राकृतिर्या त्रिभुवनजननस्थेमसंहारधुर्या-
मर्यादालङ्घनं वः क्षपयतु महती हेतिवर्यस्य नाभिः ॥ ५९ ॥

अन्वयः—या चतुर्भिः अङ्गैः वाणीइव सुमनसांसदसि द्योतमानस्वरूपा। या मुरारेः, वाह्वन्तस्था श्रीः इव अखिलम्, अभिमतं स्पर्शयन्ती या दुर्गा-

इव उग्राकृतिः या त्रिभुवनजननस्थेमसंहारधुर्या । सा हेतिवर्यस्य नाभिः वः मर्यादालङ्घनं क्षपयतु ।।५९।।

जो अपने नेमि-अर-नाभि और अक्ष इन चारों अंगोंके साथ एवं परा-पश्यन्ती-मध्यमा तथा वैखरीसे सम्पन्न श्री सरस्वती देवीकी तरह देव स्वरूप विद्वन्मण्डलमें प्रकाश करती है। तथा भगवान्के वक्ष स्थलमें विराजमान श्रीमहालक्ष्मीके सदृश अपने आश्रितोंके लिये अभीष्ट फल वितरण किया करती है। एवं दुर्गादेवीकी भांति जो उग्र स्वरूप वाली है और जिसमें तीनों लोककी उत्पत्ति स्थिति तथा लयकी पूर्ण क्षमता है। वह श्रीचक्रराजकी नाभि आपके वैदिक धर्मकी मर्यादाके अतिक्रामक पापोंको नष्ट कर दे ॥ ५९ ॥

स्रग्भिः संतानजाभिर्मधुरमधुरसस्यन्दसंदोहिनीभिः
पाटीरैः प्रौढचन्द्रातपचयसुषमालोपनैर्लेपनैश्च ।
धूपैः कालागरूणामपि सुरसुदृशो विस्रमर्चासु यस्या-
गन्धं रुन्धन्ति सा वाश्चिरमसुरभिदो नाभिरव्यादभव्यात् ॥ ६० ॥

अन्वयः—सुरसुदृशोयस्या विस्रं (अशुभगन्धं) अर्चासु सन्तानजाभिः, मधुरमधुरसस्यन्दसन्दोहनीभिः स्रग्भिः प्रौढचन्द्रातपचयसुषमा लोपनैर्लेपनैः पाटीरैः कालागरूणीं धूपैश्चरुन्धन्ती सा असुरभिदो नाभिः वः चिरम् अभव्यात् अव्यात् ॥ ६० ॥

देवांगनायें जिस नाभिके असुर संहार जन्य मांस शोणितके दुर्गन्धको, पूजार्थ लाये हुए पारिजात पुष्पोंसे बनी हुई तथा मधुर-पराग झरनेवाली सुन्दर मालाओं द्वारा, तथा पूर्ण चन्द्रकी चन्द्रिका जालको लजाने वाले सुरभि चन्दनके लेपसे, एवं कृष्ण अगरु आदि सुगंधित धूपोंसे हटाती हैं। वह दैत्य विनाशक भगवान सुदर्शनकी नाभि, आपकी, जन्म-मरण रूप चिरन्तन अमंगलसे रक्षा करें ॥६०॥

अंहः संहत्यदग्ध्वाप्रतिजनिजनितं प्रौढसंसारवन्या-
दूराध्वन्यानधन्यान्महति विनतिभिर्धामनि स्थापयन्ती ।

विश्रान्तिंशाश्वतीं या नयति रमयतां चक्रराजस्य नाभिः
संयन्मोमुह्यमानत्रिदशरिपुदशासाक्षिणीसाऽक्षिणी वः ॥ ६१ ॥

अन्वयः—या पिण्डिका, विनतिभिः, प्रतिजनिजनितं, अंहः, संहृत्य दग्ध्वा, प्रौढसंसारवन्यादूराध्वन्यान् अधन्यान् महति धामनि स्थापयन्ती । या शाश्वतीं विश्रान्तिं नयति, संयन्मोमुह्यमाना त्रिदशरिपुदशासाक्षिणी वः अक्षिणी रमयताम् ॥६१॥

जो शरणागतोंकी जन्म जन्मार्जित पापराशिको भस्म करके और दुस्तर संसार रूप वनमें चिरकालसे भटकते हुए भक्त पथिकोंको आनन्दरूप श्री वैकुण्ठधाममें पहुंचा कर उन्हें शाश्वत् शान्ति प्रदान करती है । तथा संग्राममें व्यामुग्ध दैत्योंकी दुर्दशाको देखनेसे सुप्रसन्न होनेवाली वह श्रीचक्रराजकी नाभि आपके नेत्रोंको आनन्द प्रदान करे ॥ ६१ ॥

॥ इति नाभिवर्णनम् ॥

अथाक्षवर्णनम्

श्रुत्वा यन्नाम शब्दं श्रुतिपथकटुकं दवनक्रीडनेषु-
स्वर्वैरिस्वैरवत्यो भयविवशधियः कातरन्यस्तशाराः ।
मन्दाक्षं यान्त्यमन्दं प्रतियुवतिमुखैर्दर्शितोत्प्रासदर्पै-
रक्षं सौदर्शनं तत्क्षपयतु भवतामेधमानां धनायाम् ॥ ६२ ॥

अन्वयः—स्वर्वैरिस्वैरवत्यः, देवनक्रीडनेषु श्रुतिपथकटुकं यन्नामशब्दं श्रुत्वा भयविवशधियः कातरन्यस्तशाराः, दर्शितोत्प्रासदर्पैः प्रतियुवतिमुखैः, अमन्दं मन्दाक्षं (व्रीडां) यान्ति । तत् सौदर्शनम् । अक्षं भवताम्, एधमानां धनायां (वाञ्छाम्) क्षपयतु ॥६२॥

दैत्य दानवोंकी स्वेच्छाचारिणी स्त्रियां पाशा खेलनेमें कर्ण-कर्कश जिस अक्ष शब्द को सुनकर भयाक्रान्त बुद्धिसे पाशे फेंक देती

हैं। और तब उन्हें देखकर मुसकुराती हुई देवाङ्गनाओं द्वारा वे बहुत लज्जित हो उठती हैं। इस प्रकारका वह श्रीसुदर्शन भगवान् का अक्ष, शब्द आदि विषयोंमें बढ़ी हुई आपकी अनुचित आकांक्षा को प्रशान्त करें ॥ ६२ ॥

व्यस्तस्कन्धं विशीर्णप्रसवपरिकरं प्रस्तपत्रोपमर्दं
संयत्वर्षासु तर्षातुरखगपरिषत्पीतरक्तोदकासु ।
अस्त्रं रक्षस्तरूणामशनिवदशनैरापतन्मूर्ध्नि मूर्ध्नि
स्तादस्त्राधीशितुर्वः स्तबकितयशसे द्विषिणां प्लोषणाय ॥ ६३ ॥

अन्वयः— तर्षातुरखगपरिषत्पीतरक्तोदकासु, संयत्वर्षासु, रक्षस्तरूणां मूर्ध्नि मूर्ध्नि अशनिवत्, व्यस्तस्कन्धं विशीर्णप्रसवपरिकरं प्रस्तपत्रोपमर्दम्, अशनैः आपतत् अस्त्राधीशितुः, अस्त्रं वः स्तबकितयशसे द्विषिणाम्, प्लोषणाय च स्तात् ॥६३॥

अत्यन्त प्याससे आतुर पक्षि वृन्द जिस संग्राम की वर्षामें रक्तका ही जल पीते हैं। वहाँ पर राक्षस रूप वृक्षोंके ऊपर मस्तकों पर बड़े तीव्र वेगसे वज्रके सदृश पड़कर जो शाखा-प्रशाखा आदि अवयवों तथा पुष्प फल रूप गर्भ एवं परिवार और पत्र रूप वाहनोंको विनष्ट कर देता है। वह अतिशीघ्रगामी श्रीसुदर्शन देवका अस्त्र, आप को विकसित कीर्ति देने तथा शत्रु विनाशके लिये सचेष्ट हो ॥ ६३ ॥

दीक्षां संग्रामसत्रे महति कृतवतो दीप्तिभिः संहताभिः
जिह्वाले सप्तजिह्वे दनुजकुलहविर्जुह्वतो नेमिजुह्वा ।
वैकुण्ठास्त्रस्य कुण्डं महदिव विलसत्पिण्डिकावेदिमध्ये
दिश्याद्दिव्यर्द्धिदेश्यं पदमिह भवतामक्षतोन्मेषमक्षम् ॥ ६४ ॥

अन्वयः—महति संग्रामसत्रे दीक्षां कृतवतः संहताभिः दीप्तिभिः जिह्वाले सप्तजिह्वे, दनुजकुलहविः, नेमिजुह्वाजुह्वतः, वैकुण्ठास्त्रस्य पिण्डिकावेदिमध्ये महत्कुण्डमिव विलसत् । अक्षतोन्मेषमक्षं भवताम्, इह, दिव्यर्द्धिदेश्यं पदं दिश्यात् ॥६४॥

महा संग्राम यज्ञमें दीक्षा लेकर, सप्त जिह्वा वाले अपने ज्वाला समूह रूप अग्निमें, जो दानव वंशकी हविको नेमि रूप स्रुक द्वारा आहुति किया करता है । तथा श्रीसुदर्शन राजकी नाभि रूप वेदिका में उत्तम यज्ञ कुण्डकी शोभा प्राप्त करता है । इस प्रकार सर्वदा प्रकाश शील वह श्रीसुदर्शन भगवान्‌का अस्त्र आपके लिये इस लोकमें भी स्वर्गके तुल्य सुखप्रद उत्तम पद प्रदान करे ॥ ६४ ॥

तुंगाद्दोरद्रिशृंगाद्दनुजविजयिनः स्पष्टदानोद्यमानां-
च्छत्रुस्तम्बेरमाणां शिरसिनिपततः स्रस्तमुक्तास्थिपुञ्जे ।
रक्तैरभ्यक्तमूर्तेर्विदलनगलितैर्व्यक्तवीराग्रितर्द्धे-
र्हर्यक्षस्यारिभङ्गं जनयतु जगतामीडितं क्रीडितं वः ॥ ६५ ॥

अन्वयः—दनुजकुलविजयिनः, तुङ्गाद्दोरद्रिशृङ्गात्, स्पष्टदानोद्यमानां, शत्रुस्तम्बेरमाणं, स्रस्तमुक्तास्थिपुञ्जे, शिरसिनिपततः विदलनगलितैः रक्तैः अभ्यक्तमूर्तेः, व्यक्तवीराग्रितर्द्धेः, हर्यक्षस्यजगतामीडितं, क्रीडितं, वः अरि-भङ्गं जनयतु ॥६५॥

दानव वंश विजयी भगवान्‌के उन्मत्त भुजदण्ड रूप पर्वतके शिखरसे निकलकर, मद चूते रहनेवाले जिनके मस्तकसे अस्थि रूप मुक्ता मालायें खिसक पड़ती हैं उन शत्रु रूप मत्त गजेन्द्रोंके शिरपर गिरकर जो उन्हें फाड़ देता है । और तब उनकी रक्त धाराओंसे रंगी हुई अपनी मूर्ति द्वारा वीर शोभा को व्यक्त करता हुआ, समस्त विश्व से वन्द्य श्रीअक्षराज की वीर क्रीड़ा, आपके शत्रु दलका विनाश करे ॥ ६५ ॥

उन्मीलत्पद्मरागं कटकमिव धृतं बाहुना यन्मुरारे-
र्दीप्तान्रश्मीन्दधानं नयनमिव यदुत्तारकं विष्टपस्य ।
चक्रेशार्कस्य यद्वा परिधिरभिदधद्दैत्यहत्यामिव द्रा-
गक्षं पक्षे पतित्वा परिघटयतु वस्तद्दृढिष्ठां प्रतिष्ठाम् ॥ ६६ ॥

अन्वयः—दीप्तान् रश्मीन् दधानं मुरारेर्बाहुना उन्मीलत्पद्मरागंकटकमिवधृतं । यदुत्तारकं विष्टपस्य नयनमिवधृतम् । यद्दैत्यहत्यामभिदधत् । चक्रेशार्कस्य परिधिरिवस्थितम् । तदक्षं पक्षे पतित्वा वः द्रढिष्ठां प्रतिष्ठां परिघटयतु ॥६६॥

जो प्रदीप्त किरणोंको धारण करता हुआ भगवान्‌के हाथों द्वारा प्रकाशमान पद्मराग मणिसे खचित कंकणके समान धारण किया जाता है । तथा संसारके उद्धारक प्रधान उपाय रूपसे स्वीकृत है। जो दैत्य दानवोंकी हिंसाको सुस्पष्ट रूपसे प्रतिपादन करता हुआ चक्र रूप सूर्यकी परिधिकी तरह विराजता रहता है। श्री चक्रेशका वह अक्ष आपका पक्षपाती बन सुस्थायी प्रतिष्ठा अतिशीघ्र सम्पन्न करे ॥ ६६ ॥

क्रीडत्प्राक्क्रोडदंष्ट्राहतिदलितहिरण्याक्षवक्षः कवाट-
प्रादुर्भूतप्रभूतक्षतजसमुदितारुण्यमुद्रं समुद्रम् ।
उन्मीलत्किंशुकाभैरुपहसदमितैरंशुभिः संशयघ्नी-
मक्षं चक्रस्य दत्तामघशतशमनं दाशुषीं शेमुषीं वः ॥ ६७ ॥

अन्वयः—क्रीडत्प्राक्क्रोडदंष्ट्रा हतिदलितहिरण्याक्षवक्षः कवाटप्रादुर्भूतप्रभूतक्षतजसमुदितारुण्यमुद्रंसमुद्रम्, उन्मीलत्किंशुकाभैः, अमितैः, अंशुभिः, उपहसत् । अघशतशमनं, चक्रस्य, अक्षं, दाशुषीं संशयघ्नीं शेमुषीं, वो दत्ताम् ॥६७॥

आदि पुरुष श्री वाराह भगवान्‌के दन्त प्रहारकी क्रीडा द्वारा विदीर्ण हुए हिरण्याक्षके वक्षस्तलसे निकली हुई रुधिर धाराकी लालिमासे रक्तिम वर्णके हो गये समुद्रको खिले हुए पलास पुष्पके समान अपनी असंख्य किरणों द्वारा जो परिहास किया करता है। वह सैकड़ों पापोंको शमन करनेवाला, श्रीचक्रराजका अक्ष आपके लिये दान स्वभाव सम्पन्न तथा संशय दूर करनेवाली विशुद्ध बुद्धि प्रदान करे ॥ ६७ ॥

पद्मोल्लासप्रदं यज्जनयति जगतीमेधमानप्रबोधां
यस्य च्छायासमाना लसति परिसरे रोहिणी तारकाग्र्या ।
नानाहेत्युन्नतत्वं प्रकटयति च यत्प्राप्तकृष्णप्रयाणं-
त्रेधा भिन्नस्य धाम्नः समुदय इव तत्पातु वश्चाक्रमक्षम् ॥ ६८ ॥

अन्वयः—यदक्षं पद्मोल्लासप्रदं जगतीमेधमानप्रबोधां जनयति । यस्य परिसरे तारकाग्र्या रोहिणी छायासमाना लसति । प्राप्तकृष्णप्रयाणं यत् नानाहेत्युन्नतत्वं प्रकटयति । एवं त्रेधाभिन्नस्य धाम्नः समुदयइव स्थितं तत् चाक्रमक्षं वः पातु ॥६८॥

जो श्रीलक्ष्मीजी तथा भक्त वर्गके मानस कमलको प्रफुल्लित एवं जगत्‌की चेतनाको समृद्ध बनाता है। जिसके समीपमें चन्द्रमाकी पत्नी ताराओंमें श्रेष्ठ श्रीरोहिणी छायाके समान हो जाती है। जो श्रीकृष्णके गमनकी सूचना देता है, या जिससे हतप्रभ हो अग्निदेव भी कृष्णवर्त्मा नाम चरितार्थ करते हैं। जो शार्ङ्ग प्रभृति अनेक आयुधों की अपेक्षा अधिक महत्त्वशाली है। इस प्रकार सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि में विभक्त तेजका राशिभूत तेजपुंज वह चक्रराजका अक्ष आप सबका रक्षण करे ॥ ६८ ॥

शोचिर्भिः पद्मरागद्रवसमसुषमैः शोभमानावकाशं-
प्रत्यग्राशोकरागप्रतिभटवपुषा भूषितं पूरुषेण ।
अन्तःस्वच्छन्दमग्नोत्थितभृगुतनयं क्षत्रियाणां क्षताना-
मारब्धं शोणितौघैः सर इव भवतो दिव्यहेत्यक्षमव्यात् ॥ ६९ ॥

अन्वयः—पद्मरागद्रवसमसुषमैः शोचिर्भिः, शोभमानावकाशंप्रत्यग्राशोकरागप्रतिभटवपुषा पूरुषेण भूषितं, क्षतानां क्षत्रियाणां शोणितौघैः, आरब्धम्, अन्तःस्वच्छन्दमग्नोत्थितभृगुतनयं सरइव स्थितं दिव्यहेत्यक्षं भवतः अव्यात् ॥६९॥

द्रवीभूत पद्मराग मणिके रसके समान शोभायमान किरणों द्वारा रक्तवर्णकी शोभासे सम्पन्न मध्य प्रदेश वाला तथा प्रफुल्ल अशोक पुष्पके रंगको हतप्रभ कर देनेवाले रक्त विग्रहधारी श्री सुदर्शन पुरुष से जो विभूषित रहता है। तथा युद्धमें काटे गये क्षत्रियोंके रक्त प्रवाह से परिपूर्ण, वह सरोवर जिसमें स्नानके अनन्तर श्रीपरशुरामजी उठ रहे हों, उसके सदृश प्रतीत होनेवाला वह श्रीसुदर्शनजीका अक्ष आप सबकी रक्षा करे ॥ ६९ ॥

मत्तानामिन्द्रियाणां कृतविषयमहाकाननक्रीडनानां-
सृष्टं चक्रेश्वरेण ग्रहणधिषणया वारिवद्वारणानाम् ।
गम्भीरं यन्त्रगर्तं कमपि कृतधियो मन्वते यत्तदेया-
दस्थूलां संविदं वस्त्रिजगदभिमतस्थूललक्षं तदक्षम् ॥ ७० ॥

अन्वयः—कृतधियो यदक्षंकृतविषयमहाकाननक्रीडनानां मत्तानां वारणानाम्, इव इन्द्रियाणां ग्रहणधिषणया चक्रेश्वरेण वारिवत् सृष्टम् गम्भीरं कमपियन्त्रगर्तं मन्वते त्रिजगदभिमतः स्थूललक्षं तदक्षं वः अस्थूलां संविदं प्रदेयात् ॥७०॥

विवेक सम्पन्न ज्ञानी लोग, जिसे विषयवासनाके जङ्गलमें विहार करनेवाले मत्त गजेन्द्रके सदृश इन्द्रिय वर्गके नियमन करनेके लिये, श्रीचक्रराज द्वारा निर्मित गजबन्धक गर्तके रूपमें एक गम्भीर यन्त्रगर्त समझते हैं। तथा तीनों लोककी अभीष्ट वस्तु प्रदान करनेमें जो समर्थ हैं। वह श्रीसुदर्शन भगवान्का अक्ष आपके लिये विवेक वाली सूक्ष्म प्रतिभा प्रदान करे ॥ ७० ॥

प्राणादीन्संनियम्य प्रणिहितमनसां योगिनामन्तरङ्ग-
तुङ्गं संकोच्य रूपं विरचितदहराकाशकृच्छ्रासिकेन ।
प्राप्तं यत्पूरुषेण स्वमहिमसदृशं धाम कामप्रदं वो-
भूयात्तद्भूर्भुवः स्वस्त्रयवरिवसितं पुष्कराक्षायुधाक्षम् ॥ ७१ ॥

अन्वयः—प्राणादीन्संनियम्य प्रणिहितमनसां योगिनामन्तरङ्गे तुङ्गं रूपं संकोच्य विरचितदहराकाशकृच्छ्रासिकेन पूरुषेण स्वमहिमसदृशं धाम यस्मात्तम् । भूर्भुवः स्वस्त्रयवरिवसितं पुष्करक्षायुधाक्षं वः कामप्रदं भूयात् ॥७१॥

योग आदिकी पद्धतिसे, प्राण आदि वायुका नियन्त्रण कर समाहित मनवाले योगियोंके अन्तःकरणमें विराजनेके लिये जिन्हें अपना विराट् स्वरूप संकुचित कर लेना पड़ता है। अतः वे ही सुदर्शन भगवान् अपने स्वरूपानुकूल जिस अक्षको अपना अधिष्ठान बनाये हैं और जो भूः भुवः तथा स्वः इन तीनों लोकोंसे अभिवन्दित होता है वह श्रीचक्रराजका अक्ष आपकी कामना सफल करे ॥ ७१ ॥

विद्वान्वीध्रेण धाम्ना चरणनखभुवा बद्धवासस्य मध्ये-
चक्राध्यक्षस्य बिभ्रत्परिहसितजपापुष्पकोशान्प्रकाशान् ।
शुभ्रैरभ्रैरदभ्रैः शरदि तत इतो व्योम विभ्राजमानं-
प्रातस्त्यादित्यरोचिस्ततमिव भवतः पातु रथांगमक्षम् ॥ ७२ ॥

अन्वयः—मध्ये बद्धवासस्य चक्राध्यक्षस्य चरणनखभुवा वीध्रेण धाम्ना विद्वान्, परिहसितजपापुष्पकोशान् प्रकाशान् बिभ्रत् । शुभ्रैः, अदभ्रैः अभ्रैः शरदि इतस्ततो विद्धम् । प्रातस्त्यादित्यरोचिस्ततम् विभ्राजमानं व्योम इव स्थितं राथाङ्गं अक्षं भवतः पातु ॥ ७२ ॥

श्रीचक्रराजके मध्य प्रदेशमें विराजमान एवं श्रीसुदर्शन पुरुषके चरण नखसे निकलनेवाली निर्मल कान्ति द्वारा जो सर्वदा सुशोभित रहता है। तथा जपा पुष्पके सौन्दर्यको तिरस्कृत करके उत्तम प्रकाश धारण करता हुआ, शुभ्र वर्णकी विविध मेघमालाओंसे संयुक्त और प्रातःकालीन सूर्यकी किरणोंसे व्याप्त होकर जो चमकते हुए आकाशके सदृश प्रतीत हुआ करता है वह श्रीसुदर्शन भगवान्का अक्ष आपकी रक्षा करे ॥ ७२ ॥

श्रीवाणीवाङ्मृडान्यो विदधति भजनं शक्तयो यस्य दिक्षु
प्राह व्यूहं यदाद्यं प्रथममपि गुणं भारती पाञ्चरात्री ।

घोरां शान्तां च मूर्तिं प्रथयति पुरुषः प्राक्तनः प्रार्थनाभि-
र्भक्तानां यस्य मध्ये दिशतु तदनघामक्षमध्यक्षतां वः ॥ ७३ ॥

अन्वयः—पाञ्चरात्री भारती यदाद्यं व्यूहं (वासुदेवसङ्कर्षणप्रद्युम्नानिरुद्धरूपम्) प्रथमं गुणं (ज्ञानम्) अपि प्राह । श्रीवाणीवाङ्मृडान्यो यस्य शक्तयः, दिक्षु भजनं विदधति । यस्याक्षस्य मध्ये स्थितः, प्राक्तनः पुरुषः भक्तानां प्रार्थनाभिः घोरां शान्तां च मूर्तिं प्रथयति । तदक्षं वा, अनघामध्यक्षतां दिशतु ॥ ७३ ॥

पाञ्चरात्र शास्त्र जिसको वासुदेव, सङ्कर्षण प्रद्युम्न और अनिरुद्ध स्वरूप बतलाता है एवं ज्ञान गुण प्रधान प्रतिपादन करता है। भगवान्‌के आदि व्यूहरूप वासुदेव आदिकी क्रमशः श्री वाणी वाक् और मृडानी ये चार शक्तियां चारों दिशाओंमें जिस व्यूहात्मक अक्षकी सेवा किया करती हैं। तथा जिसके मध्यमें विराजमान होकर श्री सुदर्शन भगवान् भक्तोंकी प्रार्थनाओं द्वारा सुप्रसन्न हो प्रसंगानुकूल उनके लिये उग्र और प्रसन्न विग्रह धारण कर अभीष्ट पूर्ण किया करते हैं। वह भगवान्‌का अक्ष आपको दोषरहित आधिपत्य पद प्रदान करे ॥ ७३ ॥

रक्षः पक्षेण रक्षत्क्षतममरगणं लक्ष्यवैलक्ष्यमाजौ-
लक्ष्मीमक्षीयमाणां बलमथनभुजे वज्रशिक्षानपेक्षे ।
निक्षिप्य क्षिप्रमध्यक्षयति जगति यद्दक्षतां दिव्यहेते-
रक्षामामक्षमां तां क्षपयतु भवतामक्षजिल्लक्ष्यमक्षम् ॥ ७४ ॥

अन्वयः—यदक्षं आजौ (रक्षःपक्षेणक्षतं लक्ष्यवैलक्ष्य अमरगणं रक्षत् । वज्रशिक्षानपेक्षे बलमथनभुजे, अक्षीयमाणां लक्ष्मीं क्षिप्रं निक्षिप्य जगति दक्षतामध्यक्षयति । अक्षजिल्लक्ष्यं दिव्यहेतेस्तदक्षं भवताम्, अक्षामां, ताम्, अक्षमां क्षपयतु ॥ ७४ ॥

समरांगणमें राक्षसोंके सैन्यसे पराजित हो जानेके कारण सलज्ज देव गणकी जो रक्षा किया करता है। तथा वज्र संचालनकी कलासे अनभिज्ञ देवेन्द्रके भुजदण्डोंमें अति शीघ्रतासे अपरिमित ऐश्वर्य डालकर लोकमें जो अपने अद्भुत सामर्थ्यका प्रकाशन किया करता है। एवं संयम नियमशील पुरुषोंके ध्यानका जो एक मात्र लक्ष्य है। वह दिव्य अक्ष आपकी बड़ीसे बड़ी अशान्तिको विनष्ट करे ॥ ७४ ॥

॥ इत्यक्षवर्णनम् ॥

अथ सुदर्शनपुरुषवर्णनम्

ज्योतिश्चूडालमौलिस्त्रिनयनवदनः षोडशोत्तुङ्गबाहुः
प्रत्यालीढेन तिष्ठन्प्रणवशशधराधारषट्कोणवर्ती ।
निःसीमेन स्वधाम्ना निखिलमपि जगत्क्षेमवन्निर्मिमाणो-
भूयात्सौदर्शनो वः प्रतिभटपरुषः पूरुषः पौरुषाय ॥ ७५ ॥

अन्वयः—ज्योतिश्चूडालमौलिः त्रिनयनवदनः षोडशोत्तुङ्गबाहुः प्रत्यालीढेन (दर्शनीयतया) तिष्ठन् प्रणवशशधराधारषट्कोणवर्ती । निस्सीमेन स्वधाम्ना निखिलमपि जगत्क्षेमवन्निर्मिमाणः प्रतिभटपरुषः सौदर्शनः, पूरुषः वः, पौरुषाय भूयात् ॥ ७५ ॥

जिसका मस्तक ज्वालारूप जटाओंसे सुशोभित रहा करता है तथा जिसके तीन नेत्र और सोलह विशाल भुजायें हैं। जो अति दर्शनीय मुद्रामें विराजता हुआ प्रणव और चन्द्रमाको आधार बनानेवाले षट्कोणमें निवास करता है। एवं अपने असीम प्रतापसे जगतका कल्याण सम्पादन करता हुआ शत्रुवर्गके प्रति अति भयंकर हो जाया करता है। वह सुदर्शन चक्र मध्यवर्ती दिव्य पुरुष आपको पुरुषत्व प्रदान करे ॥ ७५ ॥

वाणी पौराणिकी यं प्रथयति महितं प्रेक्षणं कैटभारेः-
शक्तिर्यस्येषुदंष्ट्रानखपरशुमुखव्यापिनी तद्विभूत्याम् ।
कर्तुं यत्तत्त्वबोधो न निशितमतिभिर्नारदाद्यैश्च शक्यो-
दैवीं वो मानुषीं च क्षिपतु स विपदं दुस्तरामस्त्रराजः ॥ ७६ ॥

अन्वयः—पौराणिकी वाणी यं पुरुषं कैटभारेः महितं प्रेक्षणं प्रथयति यस्य शक्तिः तद्विभूत्याम्, इषुदंष्ट्रानखपरशुमुखव्यापिनी भवति । यत्तत्त्व-बोधः निशितमतिभिः नारदाद्यैश्च कर्तुं न शक्यः । स अस्त्रराज, वः दुस्तरां दैवीं मानुषीं च विपदं क्षिपतु ॥ ७६ ॥

वेद एवं पुराण आदि जिसे भगवानका प्रशस्य संकल्प स्वरूप प्रतिपादन करते हैं । तथा जिसकी शक्ति भगवानके राम वाराह नृसिंह परशुराम आदि विभव रूपोंके इषु-दंष्ट्रा नख और परशु प्रभृति आयुधोंमें व्याप्त है । एवं जिसके तात्विक स्वरूपको सूक्ष्म बुद्धि वाले नारद प्रभृति महर्षि गण भी नहीं जान पाते । वह श्रीसुदर्शन पुरुष आपकी दुस्तर दैवी तथा मानुषी आपत्तियोंको नष्ट करें ॥ ७६ ॥

रूढस्तारालवाले रुचिरदलचयः श्यामलैः शस्त्रजालै-
र्ज्वालाभिः सप्रवालः प्रकटितकुसुमो बद्धसंघैः स्फुलिंगैः ।
प्राप्तानां पादमूलं प्रकृतिमधुरया छायया तापहृद्वो-
दत्तामुद्दोः प्रकाण्डः फलमभिलषितं विष्णुसंकल्पवृक्षः ॥ ७७ ॥

अन्वयः—तारालवालेरूढः श्यामलैः शस्त्रजालैः रुचिरदलचयः ज्वालाभिः सप्रवालः बद्धसंघैः स्फुलिङ्गैः प्रकटितकुसुमः, उद्यो ऽप्रकाण्डः । पादमूलं प्राप्तानां प्रकृतिमधुरया छायया तापहृत्विष्णुसंकल्पवृक्षः वः, अभिलषितं फलं दत्ताम् ॥ ७७ ॥

जो प्रणवरूप क्यारीमें प्रकट हुआ है तथा कुन्त-कृपाण आदि शस्त्र समूह उसके सुन्दर सुन्दर पत्ते और रक्तवर्णकी ज्वालायें कोमल २ किसलय (कलिे) हैं । अग्निके स्फुलिंग जिसके पुष्प एवं उच्च

भुजदण्ड ही स्कन्ध हैं। जो अपने चरणके आश्रित प्राणियोंके तापको अपनी स्वाभाविक मधुर छाया द्वारा प्रशान्त करता रहता है। इस प्रकार भगवान विष्णुका संकल्प स्वरूप वह श्रीसुदर्शनरूप वृक्ष आप के लिये अभीष्ट अमृतमय फल प्रदान करे ॥ ७७ ॥

धाम्नामैरम्मदानां निचयमिव चिरस्थायिनां द्वादशानां-
मार्तण्डानां समूहं मह इव बहुलां रत्नभासामिवर्द्धिम् ।
अर्चिस्संघातमेकीकृतमिव शिखिनां वाडवाग्रेसराणाम्
शंकन्ते यस्य रूपं स भवतु भवतां तेजसे चक्रराजः ॥ ७८ ॥

अन्वयः—यस्य रूपं चिरस्थायिनाम्, ऐरम्मदानां धाम्नां निचयमिव द्वादशानां मार्तण्डानां महस्समूहमिव, रत्नभासां बहुलाम्, ऋद्धिमिव, वाडवाग्रेसराणाम्, शिखिनाम्, एकीकृतमर्चिस्संघातमिव, (द्रष्टारःशंकन्ते) सचक्र राजः भवतां तेजसे भवतु ॥ ७८ ॥

जिसके स्वरूपके विषयमें दर्शक गण यह विकल्प किया करते हैं कि क्या? यह अधिक कालतक स्थिर रहने वाली विद्युत्का तेज पुञ्ज है? अथवा द्वादश सूर्योंका एकत्रित तेज समूह है? या रत्न प्रभाओं की अति विशिष्ट समृद्धि है? अथवा बड़वानलकी भी अपेक्षा अधिक तेजस्वी अग्नि ज्वालाओंका सामूहिक तेज पुञ्ज है? इस तरहके अनेक विकल्पोंका विषय वह चक्रराज सुदर्शन सर्वत्र आपके तेजका विस्तार करे ॥ ७८ ॥

उग्रंपश्याक्षमुद्यद्भ्रुकुटि समुकुटं कुण्डलिस्पष्टदंष्ट्र-
चण्डास्त्रैर्बाहुदण्डैर्लसदनलसमक्षौमलक्ष्योरुकाण्डम् ।
प्रत्यालीढस्थपादं प्रथयतु भवतां पालनव्यग्रमग्रे-
चक्रेशोऽकालकालेरितभटविकटाटोपलोपाय रूपम् ॥ ७९ ॥

अन्वयः—चक्रेशः उग्रं पश्याक्षम्, उद्यद् भ्रुकुटि, समुकुटं कुण्डलि स्पष्टदंष्ट्रं चण्डास्त्रैर्बाहुदण्डैर्लसत् । अनलसमक्षौमलक्ष्योरु काण्डम् प्रत्यालीढं

स्थपादं, पालनव्यग्ररूपम्, अकालकालेरितभटविकटाटोपलोपाय भवताम् अग्रे प्रथयतु ॥ ७९ ॥

जिनके नेत्र अत्यन्त भयंकर तथा भ्रुकुटि अतीव उग्र हैं। मुकुट और कुण्डल धारण किये रहते हैं। बड़े २ दांत हैं और भुजदण्डोंमें प्रलय मचादेनेवाले अस्त्र सर्वदा धारण किये रहते हैं। जो ऊरुभाग तक अग्निज्वालाके सदृश धौतवस्त्र पहने हुए अपने आसन पर एक विलक्षण ढंगसे बैठकर जगत्की रक्षाके लिये सतर्क रहा करते हैं। ऐसे श्री चक्रराज सुदर्शन अकालमें प्रेरित यमराजके दूतोंके गर्वको विनष्ट करनेकेलिये अपने उक्त दिव्य स्वरूपको आपके समक्ष प्रकट करें ॥ ७९ ॥

चक्रं कुन्तं कृपाणं परशुहुतवहावंकुशं दण्डशक्ती-
शंखं कोदण्डपाशौ हलमुसलगदावज्रशूलांश्च हेतीन् ।
दोर्भिः सव्यापसव्यैर्दधदतुलबलस्तम्भितारातिदर्पै-
र्व्यूहस्तेजोभिमानी नरकविजयिनो जृम्भतां संपदे वः ॥ ८० ॥

अन्वयः—नरकविजयिनस्तेजोभिमानीव्यूहः (अवतारविशेषः) अतुलबलस्तम्भितारातिदर्पैः, सव्यापसव्यदोर्भिः, चक्रं कुन्तं कृपाणं परशुहुतवहौ, अंकुशं दण्डशक्ती शंखं कोदण्डपाशौ, हलमुसलगदावज्रशूलाश्चहेतीन् दधत् वः सम्पदे जृम्भताम् ॥ ८० ॥

नरकासुर विजयी भगवान्के तेजके विशिष्ट व्यूह (अवतार) अपने असीम बलसे शत्रुवर्गके दर्पको विनष्ट कर देने वाले अपने दक्षिण और वाम सोलहो हाथोंमें क्रमशः चक्र-कुन्त-कृपाण-परशु-अग्निबाण-अंकुश-दण्ड-शक्ति-शंख-धनुष-पाश-हल-मुसल-गदा-वज्र और शूल नामक आयुधोंको धारण करते हुए भगवान श्रीसुदर्शन पुरुष आपको सम्पत्ति प्रदान करनेके लिये अभिव्यक्त हों ॥ ८० ॥

पीतं केशे रिपोरप्यसृजि रथपदे संश्रितेऽप्युत्कटाक्षं-
चन्द्राधःकारि यन्त्रे वपुषि च दलने मण्डले च स्वराङ्कम् ।

हस्ते वक्त्रे च हेतिस्तवकितमसमं लोचने मोचने च-
स्तादस्तोकाय धाम्ने सुरवरपरिषत्सेवितं दैवतं वः ॥ ८१ ॥

अन्वयः—रिपोरप्यसृजि केशे च पीतं रथपदेसंश्रिते ऽप्युत्कटाक्षं, यन्त्रे वपुषिच चन्द्राधःकारि, दलने मण्डले च स्वराङ्कम् हस्तेवक्रे च हेतिस्तवकितं लोचने मोचने च असमम्, सुरवरपरिषत्सेवितं दैवतं वः स्तोकाय धाम्ने स्तात् । ८१ ॥

केश और शत्रु शोणितके विषयमें जिनमें पीत गुण है, अर्थात् केश पीतवर्णके और शत्रु शोणित भी पी लेते हैं। रथ चरण और संश्रित व्यक्तिके विषयमें जिनके अक्ष (नेत्र) अति उत्कट और उदार हैं। जिनके यन्त्र और शरीरसे चन्द्रमा भी तिरस्कृत रहता है। तथा जिनके शत्रु दलन और मण्डलमें स्वर (निर्घोष) एवं प्रणवका अङ्क है। जिनके हस्त और मुखमें आयुधों तथा ज्वालाओंके स्तबक (गुच्छे) हैं और नेत्र तथा शत्रुमोचन असमान हैं। इस प्रकार देव गणसे सुसेवित श्रीसुदर्शन पुरुष आपको प्रकृष्ट तेज प्रदान करें ॥८१॥

चित्राकारैः स्वचारैर्मितसकलजगज्जागरूकप्रतापो-
मन्त्रं तन्त्रानुरूपं मनसि कलयतो मानयन्नात्मगुह्यान् ।
पञ्चाङ्गस्फूर्तिनिर्वर्तितरिपुविजयो धाम षण्णां गुणानाम्-
लक्ष्मीं राजासनस्थोवितरतु भवतां पूरुषश्चक्रवर्ती ॥ ८२ ॥

अन्वयः—चित्राकारैः स्वचारैः, मितसकलजगज्जागरूकप्रतापः, तन्त्रानुरूपं मन्त्रं मनसि कलयतः, आत्मगुह्यान् मानयन् पंचाङ्गस्फूर्तिनिर्वर्तितरिपुविजयः, षण्णां गुणानां धाम राजासनस्थः चक्रवर्ती पूरुषः, भवतां लक्ष्मीं वितरतु ॥ ८२ ॥

जो अपने विविध स्वरूपके परिभ्रमण द्वारा समस्त ब्रह्माण्डको माप लिये हैं। जिनका प्रताप देदीप्यमान है। पाञ्चरात्र तन्त्रके अनुसार सुदर्शनके मन्त्रको अपने हृदयमें संकलन करते हुए एवं अपने

रहस्यसे अपने भक्त वर्गको सम्मानित करते हुए, जो अपने पञ्चांग न्यास सम्पत्ति द्वारा शत्रु दलपर विजय प्राप्त किया करते हैं। जो ज्ञान-शक्ति आदि षट्गुणोंके अधिष्ठान हैं। ऐसे चन्द्रमण्डलके सिंहासन पर विराजमान चक्रवर्ती श्रीसुदर्शन राज आपके लिये लक्ष्मी वितरण करें॥ ८२ ॥

अक्षावृत्ताभ्रमालान्यरविवरलुठच्चन्द्रचण्डद्युतीनि-
ज्वालाजालावलीढस्फुटदुडुपटलीपाण्डुदिङ्मण्डलानि ।
चक्रान्ताक्रान्तचक्राचलचलितमहीचक्रवालार्तशेषा-
ण्यस्त्रग्रामाग्रिमस्य प्रददतु भवतां प्रार्थितं प्रस्थितानि ॥ ८३ ॥

अन्वयः—अक्षावृत्ताभ्रमालानि, अरविवरलुठच्चन्द्रचण्डद्युतीनि, ज्वालाजालावलीढस्फुटदुडुपटलीपांडुदिङ्मण्डलानि, चक्रान्ताक्रान्तचक्राचलचलितमहीचक्रवालार्त.शेषाणि, अस्त्रग्रामाग्रिमस्य प्रस्थितानि भवतां प्रार्थितं प्रददतु ॥ ८३ ॥

जिसके अक्षमें मेघ मालायें इधर उधर बार बार आवर्तन किया करती हैं। तथा अरोंके मध्य प्रदेशमें चन्द्र और सूर्य लुण्टन करते रहते हैं। एवं जिसके ज्वाला समूहसे हतप्रभ, और छिन्न-भिन्न, नक्षत्र मण्डलकी कान्तिसे दिशायें धवल वर्णकी प्रतीत हुआ करती हैं। इसी प्रकार जिनके प्रयाण कालमें चक्रकी नेमि द्वारा लोकालोक पर्वत के आक्रान्त हो जानेसे भूमण्डल कम्पित होने लगता तथा शेषको भी वेदनाका अनुभव होने लगता है। एवंभूत अस्त्रसमूहशिरोमणि चक्रराज श्री सुदर्शन भगवान्के प्रयाण आपको अभिलषित अर्थ प्रदान करें॥ ८३ ॥

शूलं त्यक्तात्मशीलं सृणिरणुकघृणिः पट्टसः स्पष्टसादः
शक्तिः शालीनशक्तिः कुलिशमकुशलं कुण्ठधारः कुठारः ।
दण्डश्चण्डत्वशून्यो भवति तनु धनुर्यत्पुरस्तात्स वः स्ताद्-
ग्रस्ताशेषास्त्रगर्वो रथचरणपतिः कर्मणे शर्मणाय ॥ ८४ ॥

अन्वयः—यत्पुरस्तात् शूलं त्यक्तात्मशीलं भवति, सृणिः, अणुकघृणिः, पट्टसः स्पष्टसादः शक्तिः शालीनशक्तिः, (अधृष्टशक्तिः) कुलिशम्, अकुशलम्, कुठारः, कुण्ठधारः, दण्डः चण्डत्वशून्यः, धनुस्तनुर्भवति ग्रस्ताशेषास्त्रगर्वः, सरथचरणपतिः, वः शार्मणाय कर्मणे स्तात् ॥ ८४ ॥

जिन दिव्य पुरुषके समक्ष शङ्करका शूल शत्रु विनाशकी प्रवीणता रूप अपने स्वभावको त्याग देता है। एवं इसी प्रकार अग्निदेवके अंकुशकी किरणें विनष्ट और वायु देवका पट्टस नामक आयुध भी छिन्न-भिन्न हो जाता है। श्रीकार्तिकेयकी शक्तिका धैर्य समाप्त और इन्द्रके वज्रकी भी कुशलता अस्तंगत हो उठती है। गणेशका कुठार कुण्ठधार, तथा यमदण्ड भी अपनी क्रूरतासे रहित, और रुद्रका धनुष भी क्षीण हो जाया करता है। इस तरह सभी अस्त्रोंके गर्वको खण्डित करनेवाले श्रीचक्रराज सुदर्शन पुरुष आपके कल्याणकारक कार्यमें सर्वदा सतर्क रहें ॥ ८४ ॥

क्षुण्णाजानेयवृन्दं क्षुभितरथगणं सन्नसान्नाय्ययूथम्-
क्ष्वेलासंरम्भहेलाकलकलविगलत्पूर्वगीर्वाणगर्वम् ।
कुर्वाणः सांपरायं रथचरणपतिः स्थेयसीं वः प्रशस्ति-
दुग्धां दुग्धाब्धिभासं भयविवशशुनासीरनासीरवर्ती ॥ ८५ ॥

अन्वयः—भयविवशशुनासीरनासीरवर्ती, क्षुण्णाजानेयवृन्दंक्षुभितरथगणं सन्नसान्नाय्ययूथम्, क्ष्वेलासंरम्भहेलाकलकलविगगलत्पूर्वगीर्वाणगर्वम्, साम्परायं कुर्वाणः रथचरणपतिः स्थेयसीं दुग्धाब्धिभासं वः प्रशस्तिं दुग्धाम् ॥ ८५ ॥

जो भयाक्रान्त इन्द्रके विजयार्थ सेनापतिका पद ग्रहण करते हैं तथा जिस युद्धमें अच्छे २ घोड़े चूर्ण विचूर्ण हो जाते, और रथपंक्तिया जर्जरित हो जातीं, एवं बड़े २ मत्तगजेन्द्र, तहस नहस हो जाया करते हैं। जहां पर विजय निमित्तक हर्षके कोलाहलकी क्रीड़ामें दैत्य वर्ग का गर्व खण्डित एवं विलीन हो जाता है। ऐसे भयंकर युद्धको करने

वाले श्रीचक्रराज सुदर्शन पुरुष आपको क्षीर समुद्रके सदृश धवल एवं सुस्थिर कीर्तिसे परिपूर्ण करें ॥ ८५ ॥

द्रुह्यद्दोःशालिमालिप्रहरणरभसोत्तानिते वैनतेये-
विद्राति द्राक्प्रयुक्तः प्रधनभुवि परावर्तमानेन भर्त्रा ।
निर्जित्य प्रत्यनीकं निरवधिकचरद्धास्तिकाश्वीयरथ्यं-
पथ्यं विश्वस्य दाश्वान्प्रथयतु भवतो हेतिरिन्द्रानुजस्य ॥ ८६ ॥

अन्वयः—द्रुह्यद्दोःशालिमालिप्रहरणरभसोत्तानितेवैनतेये, द्राक् विद्राति (पलायमानेप्रधावतिसति) प्रधनभुविपरावर्तमानेन भर्त्रा प्रयुक्तः, निरवधिकचरद्धास्तिकाश्वीरथ्यंप्रत्यनीकं निर्जित्य विश्वस्य पथ्यं दाश्वान् । इन्द्रानुजस्यहेतिः भवतः प्रथयतु ॥ ८६ ॥

शत्रु संहारमें विलक्षण सामर्थ्य वाले भुजदण्डोंसे सम्पन्न माली नामक दैत्यके गदा आदिके प्रहारसे जर्जरित होने पर जब गरुड़जी अतिशीघ्र रण स्थलसे विमुख होने लगे, तो भगवान फिर उन्हें लौटा कर और जिन श्रीसुदर्शन पुरुषको नियुक्त कर उनके द्वारा असंख्य हाथी घोड़े तथा रथों से व्याप्त शत्रु सैन्यपर विजय दिलाये एवं विश्व का कल्याण किये हैं । वे चक्राधीश श्री सुदर्शन राज आपको प्रख्यात करें ॥ ८६ ॥

नन्दिन्यानन्दशून्ये गलति गणपतौ व्याकुले बाहुलेये-
चण्डे चाकित्यकुण्ठे प्रमथपरिषदि प्राप्तवत्यां प्रमाथम् ।
उच्छिद्याजौ बलिष्ठं बलिजभुजवनं यो ददावादिभिक्षो-
र्भिक्षां तत्प्राणरूपां स भवदकुशलं कृष्णहेतिः क्षिणोतु ॥ ८७ ॥

अन्वयः—आजौ नन्दिन्यानन्दशून्ये, गणपतौ गलति, बाहुलेये व्याकुलेसति, चण्डे चाकित्यकुण्ठे, प्रमथपरिषदिप्रमाथं प्राप्तवत्यां, बलिष्ठं बलिजभुजवनम्, उच्छिद्य आदिभिक्षोः (शिवस्य) तत्प्राणरूपां भिक्षां यः प्रददौ सः कृष्णहेतिः भवदकुशलं क्षिणोतु ॥ ८७ ॥

जो युद्धमें नन्दीश्वरको निरानन्द करके गणेशको भगा दिये तथा कार्तीकेयको व्याकुल बना और चण्ड नामक प्रमथको भी चकित तथा कुण्ठित कर दिये। इस प्रकार शंकर जीके समस्त प्रमथ गणके अस्त व्यस्त हो जानेपर बलिपुत्र बाणासुरके भुज समूह रूप वनको भी काटकर जो आदि भिक्षुक श्री शंकर जीको बाणासुरकी प्राण भिक्षा देकर प्रसन्न कर दिये। वे श्रीचक्रेश श्रीसुदर्शनपुरुष आपके अमङ्गल को नष्ट करें ॥ ८७ ॥

रक्तौघाभ्यक्तमुक्ताफललुलितलसद्वीचिवृद्धौ महाब्धौ-
संध्यासंनद्धताराजलधरशबलाकाशनीकाशकान्तौ ।
गम्भीरारम्भमम्भश्चरमसुरकुलं वेदविघ्नं विनिघ्नन्
निर्विघ्नं वः प्रसूतां व्यपगतविपदं संपदं चक्रराजः ॥ ८८ ॥

अन्वयः—रक्तौघाभ्यक्तमुक्ताफललुलितलसद्वीचिवृद्धौ, सन्ध्यासम्बद्धताराजलधरशबलाकाशनीकाशकान्तौ, महाब्धौ अम्भश्चरम्, गम्भीरारम्भं वेदविघ्नमसुरकुलं विनिघ्नन्, चक्रराजः, वः व्यपगतविपदं निर्विघ्नं प्रसूताम् ॥ ८८ ॥

शत्रुओंके रक्त प्रवाहसे रंजित मोतियोंसे विशिष्ट एवं चञ्चल लहरियोंसे परिपूर्ण वह महासमुद्र, जिसकी कान्ति, सायंकालीन मेघ तथा तारागणके मिश्रित रक्त श्वेत वर्णवाले आकाश मण्डलके सदृश प्रतीत हुआ करती है। उस समुद्रके जलमें संचरण स्वभाव वाले, वेद के अपहर्ता, भयङ्कर असुर कुलको, निर्विघ्न निर्मूलन करनेवाले श्री चक्रराज सुदर्शन आपके लिये निरापद सम्पत्ति प्रदान करें ॥ ८८ ॥

काशीविप्लोषचैद्यक्षपणधरणिजध्वंससूर्याविधान-
ग्राहद्वेधात्वमगलित्रुटनमुखकथावस्तवः कीर्तिगाथाः ।
गीयन्ते किन्नरीभिः कनकगिरिगुहागेहिनीभिर्यदीया-
देयाद्दैतेयवैरी स सकलभुवनश्लाघनीयां श्रियं वः ॥ ८९ ॥

अन्वयः—काशीविप्लोषचैद्यक्षपणधरणिजध्वंससूर्यापिधानग्राहद्वेधात्व-मालित्रुटनमुखकथावस्तवः यदीयाः कीर्तिगाथाः कनकगिरिगुहागेहिनीभिः किन्नरीभिः गीयन्ते । सा दैतेयवैरी सकलभुवनश्लाघनीयां श्रियं वः दे-यात् ॥ ८९ ॥

काशी पुरीका जलाना, शिशुपालका शिरश्छेदन तथा नरकासुर वध एवं जयद्रथ वधके समय सूर्यका आच्छादन और ग्राहके शरीर का काटना, मालि राक्षसका भञ्जन आदि जिनकी विशेष कीर्ति कथाओंको सुमेरु पर्वतकी कन्दराओंमें रहनेवाली देवाङ्गनायें गाया करती हैं। वे दानव संहारकर्ता श्रीसुदर्शन पुरुष आपके लिये सकल लोक प्रशस्य सम्पत्ति प्रदान करें ॥ ८९ ॥

नानावर्णान्विवृण्वन्विरचितभुवनानुग्रहान्विग्रहान्य-
श्चक्रेष्वष्टासु मृष्टासुरवरतरुणीकण्ठकस्तूरिकेषु ।
आतारादर्णमालावधिषु वसति यः पूरुषो वः स वध्यात्-
व्यध्वैरुद्धूतसत्त्वैरुपहितमबहिर्ध्वान्तमध्वान्तवर्ती ॥ ९० ॥

अन्वयः—यः पूरुषः मृष्टासुरवरतरुणीकण्ठकस्तूरिकेषु आतारादर्ण-मालावधिषु अष्टासु चक्रेषु नानावर्णान्विरचितभुवनानुग्रहान्विवृण्वन्, अध्वान्तवर्ती सः वः, उद्धूतसत्वैर्व्यध्वैः, उपहितम् अबहिर्ध्वान्तं वध्यात् ॥ ९० ॥

जो श्री सुदर्शन पुरुष श्रेष्ठ असुरोंकी स्त्रियोंको कण्ठाभरण कस्तूरी चूर्णसे शून्य बना देते हैं। एवं प्रणवसे मातृका अक्षरपंक्ति पर्यन्त अष्टचक्रोंमें अनेक प्रकारके वर्ण वाले संसारके अनुग्रहके लिये विविध स्वरूपको प्रकट करते हुए भक्तोंके लिये निश्चित कल्याणका मार्ग प्रदर्शन करते रहते हैं। वे सुदर्शन भगवान् अवैदिक मार्गके संसर्गसे आये हुए आपके आन्तर अज्ञानको नष्ट करें ॥ ९० ॥

(अष्ट चक्रोंका स्वरूप अहिर्बुध्न्य संहितामें वर्णित है)

द्वात्रिंशत्षोडशाष्टप्रभृतिपृथुभुजस्फूर्तिभिर्मूर्तिभेदैः
कालाद्ये चक्रषट्के प्रकटितविभवः पञ्चकृत्यानुरूपम् ।
अर्थानामर्थितानामहरहरखिलं निर्विलम्बैर्विलम्बैः
कुर्वाणो भक्तवर्गं कुशलिनमवतादायुधग्रामणी र्वः ॥ ९१ ॥

अन्वयः—द्वात्रिंशत्षोडशाष्टप्रभृतिपृथुभुजस्फातिभिर्मूर्तिभेदैः, कालाद्येचक्रषटके पञ्चकृत्यानुरूपं प्रकटितविभवः अर्थितानामर्थानां निर्विलम्बैः, विलम्बैः (प्रदानैः) अखिलभक्तवर्गम् अहरहः कुशलिनं कुर्वाणः, आयुधग्रामणीर्वः अवतात् ॥ ९१ ॥

जो बत्तीस-सोलह एवं आठ, आदि मांसल भुजा वाले दिव्य स्वरूपोंसे काल-प्रकृति-पुरुष-महत् और अहंकार तथा जगत् आदि षट्-चक्रोंमें लोकके तिरोभाव-सृष्टि-स्थिति-संहार एवं अनुग्रह इन पांच रूपोंको धारण कर अपने वैभवको प्रकट करते हैं। जो प्रार्थियों को अतिशीघ्र अभीष्ट प्रदान कर सभी भक्तोंको निरन्तर सुखी रखते हैं। वे सुदर्शन पुरुष आपकी रक्षा करें ॥ ९१ ॥

कोणैरर्णैः सरोजैरपि कपिशगुणैः षड्भिरुद्भिन्नशोभे-
श्रीवाणीपूर्विकाभिर्दधति विकसतः शक्तिभिः केशवादीन् ॥
तारान्ते भूपुरादौ रथचरणगदाशार्ङ्गखड्गाङ्किताशे-
यन्त्रे तन्त्रोदिते वः स्फुरतु कृतपदं लक्ष्म लक्ष्मीसखस्य ॥ ९२ ॥

अन्वयः—षड्भिः कपिशगुणः कोणैः, अर्णैः (अक्षरैः) सरोजैः उद्भिन्नशोभे भूपुरादौ तारांते, रथचरणगदाशार्ङ्गखड्गांकिताशे, श्रीवाणीपूर्विकाभिः, शक्तिभिर्विकतः केसशवादीन् दधति। तन्त्रोदिते यन्त्रे कृतपदं, लक्ष्मीसखस्य लक्ष्म वः स्फुरतु ॥ ९२ ॥

जो पिंगल वर्णके षट्कोण, षट्अक्षर और षट्पद्मोंसे सुशोभित रहते हैं। जिसके आदिमें भूविम्ब तथा अन्तमें प्रणव विराजता है जिसकी पूर्व आदि दिशाओंमें चक्र-कौमोदकीगदा-शार्ङ्ग-

धनुष और नन्दकखड्ग अंकित रहते हैं। जो श्री, वाणी, वाक, तथा मृडानी आदि शक्तियोंसे सुशोभित होते हुए केशव आदि द्वादश व्यूह मूर्तियोंको धारण करते एवं पाञ्चरात्र आगममें कहे गये यन्त्र स्वरूपमें विराजमान रहते हैं। श्री विष्णु भगवान्के प्रधान चिह्नभूत वे श्री सुदर्शन पुरुष आपको दर्शन देनेके लिए प्रकट होवें ॥ ९२ ॥

दंष्ट्राकान्त्या कडारे कपटकिटितनोः कैटभारेरधस्ता-
दूर्ध्वे हासेन विद्धे नरहरिवपुषो मण्डले वासवीये ।
प्राक्प्रत्यक्सांध्यसान्द्रच्छविभरभरिते व्योम्नि विद्योतमानो-
दैतेयोत्पातशंसी रविरिव रहयत्वस्त्रराजो रुजं वः ॥ ९३ ॥

अन्वयः—पूर्वश्लोकोक्तयन्त्रस्य अधस्तात् कपटकिटितनोः (कपटवराहमूर्तेः) दंष्ट्राकान्त्याकडारे (कपिलवर्णे) ऊर्ध्वं नरहरिवपुषः, हासेन विद्धे (धवले) वासवीये मण्डले स्थितः सन् प्राक्-प्रत्यक् सान्ध्यसान्द्रच्छविभरभरिते व्योम्नि, दैतेयोत्पातशंसी रविरिव विद्योतमानः, अस्त्रराजो वः रुजं रहयतु ॥ ९३ ॥

पूर्व कथित यन्त्रका अधोभाग श्रीवराह भगवान्की दन्तकांतिके संसर्गसे पिङ्गलवर्णका है और ऊर्ध्वभाग श्रीनृसिंह भगवान्के हास्य प्रकाशसे धवल वर्णका। तथा जो इन्द्रमण्डलमें विराजते हुए प्रातः सायंकालीन सघन कांति पुञ्जसे व्याप्त आकाश मण्डलमें दैत्योंके विनाशकी सूचना देने वाले श्रीसूर्य देवके सदृश प्रकाशमान रहते हैं। वे श्री चक्रराज सुदर्शन आपके दृष्टादृष्ट प्रतिबन्धक रोगोंको विनष्ट करें ॥ ९३ ॥

कोणे क्वापि स्थितोऽपि त्रिभुवनविततश्चन्द्रधामापि रूक्षो-
रुक्मच्छायोऽपि कृष्णाकृतिरनलमयोऽप्याश्रितत्राणकारी ।
धारासारोऽपि दीप्तो दिनकररुचिरप्युल्लसत्तारकश्री-
श्चक्रेशश्चित्रभूमावितरतु विमतत्रासनं शासनं वः ॥ ९४ ॥

अन्वयः—क्वापि यन्त्रकोणे स्थितोऽपि त्रिभुवनविततः, रुक्मच्छायोऽपि कृष्णाकृतिः अनलमयोऽपि आश्रितत्राणकारी । धारासारोऽपि दीप्तः । दिनकररुचिरपि उल्लसत्तारकश्रीः । चित्रभूमा चक्रेशः वः विमतत्रासनं, शासनं वितरतु ॥ ९४ ॥

जो यन्त्रके एक कोणमें रहते हुए भी त्रिलोकमें व्याप्त हैं। स्वर्ण कांति होनेपर भी कृष्ण विग्रहवान हैं । अग्निवर्ण होने परभी भक्तरक्षक हैं । जलधारारूप होकर भी अत्यन्त प्रदीप्त रहते हैं। जो सूर्य कांति होकर भी तारक (प्रणव) की छवि धारणकरते हैं । इस प्रकार परस्पर विरुद्ध धर्मोंके आश्रय श्री चक्रराज सुदर्शन आपके लिए शत्रु संत्रासक शासकत्व प्रदान करें ॥ ९४ ॥

शुक्लः शक्रस्तवस्ते सह दहनकलां कालतेऽयं न कालः-
किं वो रक्षांसि रक्षा तव फलतु पते यादसां पादसेवा ।
वायो हृद्योऽसि भर्तुस्त्यज धनद मदं सेव्यतां त्र्यम्बकेति-
प्राहुर्यद्यन्त्रपालाः स दनुजविजयी हन्तु तन्द्रालुतां वः ॥ ९५ ॥

अन्वयः—हेशक्र ! तेस्तवः शुक्लः । हेदहन ! कलांसह तिष्ठ । हेकाल ! अयं ते कालो न । हेरक्षांसि ! वो रक्षा किम् । हेयादसांपते ! तव पादसेवा फलतु । हेवायो ! भर्तुः हृद्योऽसि । हेधनद ! मदं त्यज हेत्र्यम्बक ! चक्रराजः सेव्यताम् । इतियन्त्रपालाः प्राहुः । स दनुजविजयी वः तन्द्रालुतां हन्तु ॥ ९५ ॥

श्री सुदर्शन पुरुषके चरण सेवक उनके विषयमें इस प्रकार की घोषणा करते रहते हैं कि हे इन्द्र ! तुम्हारी स्तुति अति निर्मल है। अग्निदेव ! तुम श्रीचक्रराजके दर्शनके लिये, क्षणमात्र रुक जावो । हे काल ! अभी तुम्हारा समय नहीं हुआ है। हे राक्षस वृन्द ! तुम्हारी रक्षा किस काम की। वरुण देव ! तुम्हारी पाद सेवा सफल है। हे वायुदेव ! तुम तो चक्रराजके अत्यन्त प्रिय पात्र हो। कुबेर ! तुम अपने धनका दुरभिमान मत करो। त्रिलोचन ! तुम चक्रराजकी सेवा

करो। इस प्रकारके दैत्य कुल विजेता श्रीचक्रराज सुदर्शन आपके जाड्य तथा आलस्यको विनष्ट करें ॥ ९५ ॥

गायत्र्यर्णारचक्रे प्रथममनुसखस्मेरपत्रारविन्दे-
बिम्बं वह्नेस्त्रिकोणं वहति जयिजयाद्यष्टशक्तौ निषण्णा ।
शोकं वोऽशोकमूले पदसविधलसद्भीमभीमाक्षभीमा-
पुंसो दिव्यास्त्रधामा पुरुषहरिमयी मूर्तिरस्यत्वपूर्वा ॥ ९६ ॥

अन्वयः—प्रथममनुसखः स्मेरपत्रारविन्दे, वह्नेस्त्रिकोणं विम्बं वहति। जयिजयाद्यष्टशक्तौ गायत्र्यर्णारचक्रे अशोकमूले निषण्णा, पदसविभ्रलसद्भीमभीमाक्षभीमा दिव्यास्त्रधामापुरुषहरिमयी (नरसिंहमयी) अपूर्वा पुंसो मूर्तिः वः शोकं अस्यतु ॥ ९६ ॥

जहां पर आदि व्यूह श्रीवासुदेवके द्वादशाक्षर मंत्रके, सखारूप, प्रफुल्ल द्वादश पत्रात्मक कमलमें, अग्निके त्रिकोण बिम्ब, कर्णिका के स्थानमें विराजमान हैं। तथा जयिनी-जया-मोहिनी-ह्लादिनी-अजिता-माया-अपराजिता और सिद्धि इन आठ शक्तियोंसे जो चक्रराज सम्पन्न हैं और गायत्रीके चौबीस अक्षर जिनके अरके सदृश हैं। वहांपर अशोक वृक्षके मूल भागमें बैठकर अपने चरणके समीपस्थ भीम और भीमाक्ष संज्ञक दो भयंकर पुरुषोंसे जो अति उग्र आकार की प्रतीत होती है। श्रीचक्रराज मे विराजमान भगवानकी वह अपूर्व नृसिंह रूप मूर्ति आपके शोकको दूर फेंक दे ॥ ९६ ॥

पाश्चात्याशोकपुष्पप्रकरनिपतितैः प्राप्तरागं परागैः
संध्यारोचिः सगन्धैस्स्वपदशशधरं प्रेक्ष्य तारानुषक्तम् ।
पद्मानाबद्धकोशान्निवसुरनिवहैरञ्जलीन्कल्प्यमानां-
श्चक्राधीशोऽभिनन्दन्प्रदिशतु सदृशीमुत्तमश्लोकतां वः ॥ ९७ ॥

अन्याय:—पाश्चात्याशोकपुष्पप्रकरनिपतितैः सन्ध्यारोचिः सगन्धैः परागैः प्राप्तरागं तारानुषक्तं स्वपदशशधरं प्रेक्ष्य आवद्धकोशान् (पद्मान्) सुरनिवहैः कल्प्यमानान्, अञ्जलीन् अभिनन्दन् चक्राधीशो वः सुदृढाम्, उत्तमश्लोकतां प्रदिशतु ॥ ९७ ॥

यन्त्रके पृष्ठवर्ती अशोक वृक्षके पुष्प समूहसे गिरे हुए सायं-कालिक लालिमाके सदृश परागों द्वारा रक्तिम वर्ण हो गये एवं प्रणवसे विशिष्ट अपने निवास स्थान चन्द्र मण्डलको देखकर देव-ताओं द्वारा की गई, निवद्धपद्म कोशकी तरह प्रार्थनाञ्जलि का अभि-नन्दन करते हुए चक्राधीश पुरुष आप सबको लोकोत्तर यश प्रदान करें ॥ ९७ ॥

रक्ताशोकस्य वेदस्य च विहितपदं प्राप्तशाखस्य मूले-
चक्रैरस्त्रैस्तदाद्यैरपि महितचतुर्द्विश्चतुर्बाहुदण्डम् ।
आसीनं भासमानं स्थितमपि भयतस्त्रायतां तत्त्वमेकं-
पश्चात्पूर्वत्र भागे स्फुटतरहरितामानुषं जानुषाद्वः ॥ ९८ ॥

अन्वय:—प्राप्तशाखस्य रक्ताशोकस्य वेदस्य च मूले विहितपदं चक्रैः, तदाद्यैः अस्त्रैः, महितचतुर्द्विश्चतुर्बाहुदण्डम् पश्चात्पूर्वत्रभागे च स्फुटतरहरिता-मानुषं (नृसिंहत्वम्) आसीनं भासमानं एकं तत्वं वः जानुषात् भयतस्त्राय-ताम् ॥ ९८ ॥

अनेक शाखा प्रशाखा युक्त रक्त अशोक तथा वेदके मूल भाग एवं प्रणवमें जो निवास करने वाले हैं। जो सुदर्शन आदि चक्र तथा पाश-अंकुश प्रभृति आयुधोंको धारण करते हुए अपने चतुर्भुज तथा षोडश भुजावाले दिव्य विग्रहसे पूजित होते हैं। तथा ऊपर-नीचे के भागमें क्रमशः सिंह और मनुष्यके विशिष्ट स्वरूपमें विराजकर

प्रकाशित होनेवाले श्रीनृसिंह एवं श्रीसुदर्शन रूप इन दोनों विग्रहोंसे विशिष्ट एकतत्व स्वरूप श्री चक्राधीश भगवान् जन्म मरणके भयसे आपका परित्राण करें॥ ९८॥

प्राणे दत्तप्रयाणे मुषितदृशि दृशि त्यक्तसारे शरीरे-
मत्यां व्यामोहवत्यां सतमसि मनसि व्याहृते व्याहृते च ।
चक्रान्तर्वर्ति मृत्युप्रतिभयमुभयाकारचित्रं पवित्रं-
तेजस्तत्तिष्ठतां वस्त्रिदशकुलधनं त्रीक्षणं तीक्ष्णदंष्ट्रम् ॥ ९९ ॥

अन्वयः—प्राणे दत्तप्रयाणे दृशि मुषितदृशि शरीरे त्यक्तसारेमत्यां व्यामोहवत्यां मनसि सतमसि व्याहृते व्याहृते च । मृत्युप्रतिभयमुभयाकार-चित्रं त्रिदशकुलधनं त्रीक्षणंतीक्ष्णदंष्ट्रं चक्रान्तर्वर्ति पवित्रं तत्तेजो । वस्तिष्ठ-ताम् ॥ ९९ ॥

प्राण प्रयाणके समय जब नेत्रकी दर्शन शक्ति क्षीण हो जाती, तथा शरीर भी अत्यन्त परवश, एवं बुद्धि विभ्रान्त बन जाती है। चित्त अन्धकारमें विलीन हो जाता, और वाणी भी स्खलित होने लगती है । तब उस समय, देव समूहकी परम सम्पत्ति, तथा मृत्यु को भी भयभीत करनेवाले, त्रिनेत्र, एवं तीक्ष्ण दांतवाले श्रीनृसिंह और पुरुष, इन दोनों विग्रहोंसे विशिष्ट श्रीसुदर्शन चक्रमें सञ्चारण-शील वह दिव्य तेज आपके समक्ष अपने विशुद्ध रूपमें प्रकट हो ॥ ९९ ॥

यस्मिन्विन्यस्य भारं विजयिनि जगतां जंगमस्थावराणां-
लक्ष्मीनारायणाख्यं मिथुनमनुभवत्यत्युदारान्विहारान् ।
आरोग्यं भूतिमायुः कृतमिह बहुना यद्यदास्थापदं व-
स्तत्तन्नित्यं समस्तं दिशतु स पुरुषो दिव्यहेत्यक्षवर्ती ॥ १०० ॥

अन्वयः—लक्ष्मीनारायणाख्यं मिथुनं जङ्गमस्थावराणां जगतां भारं विजयिनि यस्मिन् विन्यस्य, अत्युदारान् विहारान्, अनुभवति । दिव्यहेत्यक्षवर्ती स पुरुषः, वः आरोग्यं भूतिम्, आयुर्दिशतु । इह बहुना कृतम् । वः, यद्यदास्थापदं तत्तत् समस्तं सद्यः दिशतु ॥ १०० ॥

श्रीलक्ष्मीनारायण भगवानका युगल विग्रह, स्थावरजंगमरूप समस्त विश्वकी, रक्षा शिक्षा आदिके समस्त भारोंको, जिन विजेता श्रीसुदर्शन पुरुषपर निर्भरकर और स्वयं निश्चिन्त हो निरतिशय आनन्द विहारका अनुभव किया करता है । सुदर्शनचक्र मध्यवर्ती वे दिव्य पुरुष आपके लिए आरोग्य ऐश्वर्य तथा आयुष्य प्रदान करें । सर्व शक्तिमान् उनके विषयमें इतना ही कहना पर्याप्त है, कि वे आपके समस्त अभीष्ट पदार्थोंको नित्यप्रति तत्क्षण प्रदान करते रहें ॥ १०० ॥

पद्यानां तत्त्वविद्याद्युमणिगिरिशविध्यंगसंख्याधराणा-
मर्चिष्वंगेषु नेम्यादिषु च परमतः पुंसि षड्विंशतेश्च ।
संघः सौदर्शनं यः पठति कृतमिदं कूरनारायणेन-
स्तोत्रं निर्विष्टभोगो भजति सपरमां चक्रसायुज्यलक्ष्मीम् ॥१०१॥

इति श्रीकूरनारायणमुनिप्रणीतं सुदर्शनशतकं समाप्तम् ॥

अन्वयः—अर्चिषु नेम्यादिषु अङ्गेषु च, तत्व, विद्या, द्युमणि-गिरिश-विध्यङ्गसंख्याधराणाम्, पद्यानाम्, अतः परं पुंसि षड्विंशतेः, संघैः कूरनारायणेन कृतं स्तोत्रं यः, पठति स निर्विष्टभोगः परमां चक्रसायुज्यलक्ष्मीं भजति ॥ १०१ ॥

इस सतकके ज्वाला वर्णनमें, चौबीस नेमिमें चौदह अरमें बारह तथा नाभिमें ग्यारह और अक्ष वर्णनमें तेरह पद्यों द्वारा एवं

इसके पश्चात पुरुष वर्णनके प्रसंगमें छब्बीस स्तुतियोंके श्लोकों द्वारा, श्री कूरनारायण मुनिसे प्रणीत इस सुदर्शन शतक नामक स्तोत्रका जोत पाठ करते हैं वे इस लोकके समस्त सुखोंके उपभोग कर लेनेके पश्चात चक्राधीश भगवान्के सायुज्य रूप मोक्ष सुखको प्राप्त करते हैं ॥ १०१ ॥

सद्धर्मामृतवर्षिणी हृदिसतां स्वानंदसंदेशिनी,
नित्यंनृत्यति यस्य वक्त्रकमलेवाणीशुभामंजुला ।
सोऽयं श्रीयुतदेवनायकमुनि र्देशेशुभे भारते,
धर्माचार्यवरोऽनिशं विजयते कल्याणकल्पद्रुमः ॥ १ ॥

शाण्डिल्यवंशकलशाम्बुधि पूर्णचन्द्रम्,
श्रीवानशैलयतिराट्पदपद्मभृङ्गम् ।
श्रीवेंकटेशचरणाम्बुजसक्तचित्तम्,
श्रीदेवनायकगुरुं शरणं प्रपद्ये ॥ २ ॥

मुद्रक और प्रकाशक—

गङ्गाविष्णु श्रीकृष्णदास,

मालिक-"लक्ष्मीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-प्रेस, कल्याण-बम्बई.